अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

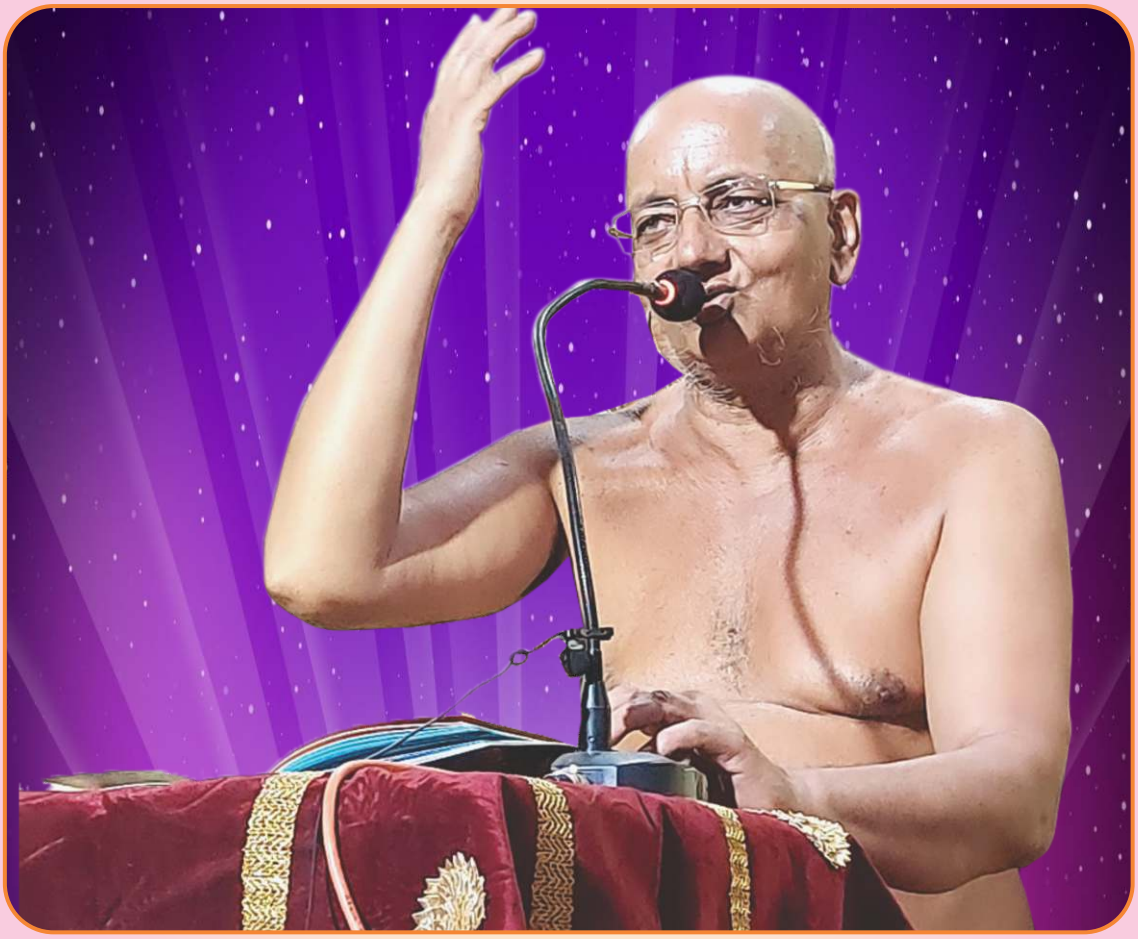

प्रवचन करते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

वर्ष : पंद्रह

अंक संयुक्त : पचपन, छप्पन

वीर निर्वाण संवत् - 2547

आषाढ़ कृष्ण, वि.सं. 2078, मार्च-जून 2021

राहतगढ़ में आचार्यश्री आर्जवसागर जी ससंघ के सान्निध्य में लोक कल्याण महामण्डल विधान।

राहतगढ़ समवशरण में आचार्यश्री की मंगल देशना।

पाक्षिक प्रतिक्रमण करते हुए आ.श्री आर्जवसागरजी ससंघ।

राहतगढ़ में लोककल्याण विधान में पूजन करते हुए इन्द्र इन्द्राणियाँ।

जैसी नगर में आ. श्री आर्जवसागरजी से धर्मलाभ लेते हुए श्रद्धालु गण।

सिद्ध चक्र महामण्डल विधान गाडरवारा में आर्यिकाश्री प्रतिभामतिजी एवं आर्यिकाश्री सुयोगमतिजी माताजी

आशीर्वाद व प्रेरणा
संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित
आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक
भाव विज्ञान
(BHAV VIGYAN)

वर्ष-पंद्रह
अंक - पचपन-छप्पन

• परामर्शदाता •
प्राचार्य डॉ. शीतलचंद जैन, जयपुर
मो. 9414783707, 8505070927
। सम्पादक ।
डॉ. अजित कुमार जैन,
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
मो. : 7222963457, व्हाट्सएप: 9425601161
email : bhav.vigyan@gmail.com
• प्रबंध सम्पादक •
डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक
85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी,
भोपाल मो. 9425011357
• सम्पादक मंडल •
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)
डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)
इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)
• कविता संकलन •
पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल
• प्रकाशक •
श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा
सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 मो.: 9479978084
email : bhav.vigyan@gmail.com

• आजीवन सदस्यता शुल्क •

शिरोमणी संरक्षक	:	50,000 से अधिक
पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3,100
आजीवन (स्थायी)सदस्यता	:	1,500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — पृष्ठ

3. आगम-अनुयोग – आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज 2
[प्रश्नोत्तर-प्रदीप]

4. सम्यग्ज्ञान-भूषण व – आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज 63
सिद्धांत-भूषण पद हेतु त्रैमासिक
धर्म प्रश्न-पत्र एवं नियंमावली

5. प्रागैतिहासिक-प्राग्वैदिक – श्री नाथूलालजी जैन शास्त्री 66
जैन धर्म और उसके सिद्धांत

7. सदाचार सूक्ति काव्य – पं. सुखदेव जैन 71
एक अनुपम रचना

7. मेरी दृष्टि में – इंजिनीयर विमल कुमार जैन 75
सदाचार सूक्ति काव्य

8. समाचार 78

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु भाव-विज्ञान धार्मिक परीक्षा बोर्ड, भोपाल द्वारा स्वीकृत

आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित

आगम-अनुयोग

[प्रश्नोत्तर-प्रदीप]

करणानुयोग

प्र.828 ज्योतिषि देवों का स्वरूप क्या है?

उत्तर जिस प्रकार एक गोले के दो खण्ड करके उन्हें ऊर्ध्व मुख रखा जावे तो चौड़ाई का भाग ऊपर और गोलाई वाला सँकरा भाग नीचे रहता है। उसी प्रकार ऊर्ध्व मुख अर्द्ध गोले के सदृश ज्योतिषि देवों के विमान स्थित हैं। विमानों का मात्र नीचे का गोलाकर भाग ही हमारे द्वारा दृश्यमान होता है तथा ज्योतिषि देवों के विमान पृथ्वीकायिक होते हैं।

प्र.829 राहु-केतु के विमानों का क्या स्वरूप है? एवं सूर्य -चन्द्र ग्रहण किसे कहते हैं?

उत्तर राहु का विमान, चन्द्र विमान के नीचे और केतु का विमान, सूर्य विमान के नीचे गमन करता है। प्रत्येक छः माह के बाद पूर्णिमा और अमावस्या के अंत में राहु चन्द्रमा को और केतु सूर्य को आच्छादित करता है, इसी का नाम ग्रहण कहा जाता है।

प्र. 830 सूर्य चन्द्र आदि की किरणों का स्वरूप क्या है?

उत्तर चन्द्रमा की किरणें शीतल होती हैं; जिनका प्रमाण बारह हजार है। सूर्य की किरणें तीक्ष्ण (उष्ण) होती हैं; जिनका प्रमाण बारह हजार है। शुक्र की किरणें तीव्र प्रकाश से उज्जवल होती हैं, उनका प्रमाण ढाई हजार है। शेष ज्योतिषी देवों की किरणें मंद प्रकाश वाली हैं।

प्र.831 विसदृश प्रमाण वाली परिधियों (वीथियों) को सूर्य चन्द्र समान काल में कैसे समाप्त (पूर्ण करते हैं?

उत्तर सूर्य और चन्द्र प्रथम वीथी में हाथीवत्, मध्यम वीथी में घोड़ेवत् और अंतिम वीथी में सिंहवत् गमन करते हैं। अर्थात् प्रथमादि वीथी से आगे जाते समय सीधी गति से एवं बाह्यादि वीथी से पीछे आते समय मन्द गति से गमन करते हैं। इस प्रकार विषम वीथियों को समान काल में पूरा कर लेते हैं।

प्र.832 ज्योतिषि देवों का गमन किस गति से होता है?

उत्तर ज्योतिषि देवों में चन्द्रमा की गति सबसे मंद है। सूर्य; चन्द्रमा की अपेक्षा शीघ्रगामी है। ग्रह; सूर्य से भी अधिक शीघ्र गामी है। नक्षत्र; ग्रह से भी अधिक शीघ्रगामी है और तारागण उससे भी अधिक शीघ्रगामी हैं। उदाहरणार्थ-

चन्द्रमा अभ्यन्तर वीथी में एक मिनिट में ४,२२,७९७ $\frac{३१}{१६४७}$ मील चलता है। अभ्यन्तर वीथी में सूर्य का एक मिनिट में ४,३७,६२३ $\frac{११}{१८}$ मील चलता है।

प्र.833 ज्योतिषि देवों के संचार (भ्रमण) से रात और दिन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के संचार से काल के विभाग रूप व्यवहार होता है। जम्बूद्वीप की वीथी के पास १८० योजन की अभ्यंतर (प्रथम) वीथी में जब सूर्य भ्रमण करता है; तब दिन अठारह मुहूर्त्त (चौदह घण्टा चौबीस मिनिट) का और रात्रि बारह मुहूर्त्त (नौ घण्टा छत्तीस मिनिट) की होती है। किन्तु जब वही सूर्य बाह्य (अंतिम) परिधि में भ्रमण करता है तब दिन १२ मुहूर्त्त का और रात्रि १८ मुहूर्त्त की होती है। श्रावण माह में कर्क राशि पर स्थित सूर्य अभ्यंतर परिधि में भ्रमण करता है। माघ माह में मकर राशि पर स्थित सूर्य बाह्य परिधि में भ्रमण करता है। क्षेत्र की दूरी और गति की हीनाधिकता से दिन छोटे-बड़े होते हैं। भ्रमण द्वारा दो सूर्य, एक परिधि को ३० मुहूर्त्त में पूरा करते हैं।

प्र.834 दक्षिणायन- उत्तरायन किस तरह प्रारम्भ होते हैं?

उत्तर सूर्य के प्रथम वीथी में स्थित होने से दक्षिणायन का और अंतिम वीथी में स्थित होने से उत्तरायन का प्रारम्भ होता है। श्रावण माह से पौष माह तक (१८३ दिन) सूर्य दक्षिणायन तथा माघ माह से आषाढ़ माह तक (१८३ दिन) उत्तरायन रहता है।

प्र.835 युग किसे कहते हैं? और उसका प्रारम्भ कब से होता है?

उत्तर पाँच वर्ष का एक युग होता है और दक्षिणायन के प्रारम्भ से युग का प्रारम्भ होता है।

प्र.836 ढाई वर्ष में एक अधिक मास की प्राप्ति कैसे होती है?

उत्तर सूर्य गमन की गलियाँ १८४ हैं। एक गली से दूसरी गली दो-दो योजन (८००० मील) की दूरी पर हैं। एक गली से दूसरी गली में प्रवेश करता हुआ सूर्य उस मध्य के दो योजन अन्तराल को पार करते हुए जाता है। इन पूरे अंतरालों को पार करने का काल बारह योजन है क्योंकि उसका एक दिन में एक अन्तराल पार करने का काल एक मुहूर्त्त (४८ मिनिट) है। अत: एक दिन में एक मुहूर्त्त की, तीस दिन में (एक मास में) ३० मुहूर्त्त अर्थात् एक दिन की और बारह माह में बारह दिन की, ढाई वर्ष में तीस दिन (एक मास) की और पाँच वर्ष स्वरूप एक युग में दो माह की वृद्धि होती है।

प्र.837 चन्द्रमा की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर चन्द्रमा की उत्कृष्ट आयु एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य की है।

प्र.838 सूर्य की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर सूर्य की उत्कृष्ट आयु एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य है।

प्र.839 शुक्र की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर शुक्र की उत्कृष्ट आयु सौ वर्ष अधिक एक पल्य है।

प्र.840 गुरु की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर गुरु की उत्कृष्ट आयु एक पल्य प्रमाण है।

प्र.841 शेष ग्रहों की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर शेष ग्रहों की उत्कृष्ट आयु अर्द्ध पल्य प्रमाण है।

प्र.842 ताराओं की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर ताराओं की उत्कृष्ट आयु पल्य के चतुर्थ भाग प्रमाण है।

प्र.843 समस्त ज्योतिषि देवों की जघन्य आयु कितनी है?

उत्तर समस्त ज्योतिषि देवों की जघन्य आयु पल्य के आठवें भाग प्रमाण है।

प्र.844 ज्योतिष्क देवांगनाओं की आयु कितनी होती है?

उत्तर ज्योतिष्क देवांगनाओं की आयु स्व-स्व देवों की आयु के अर्द्धभाग प्रमाण होती है। उपर्युक्त आयु ज्योतिषि विमानों की ना होकर उनमें रहने वाले देव-देवियों की है।

प्र.845 ज्योतिषि देवों के अवधिज्ञान का विषय कितना है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के अवधिज्ञान का विषय भवनवासी देवों के अवधिज्ञान के विषय से असंख्यात गुणा है।

प्र.846 ज्योतिषि देवों के शरीर की अवगाहना कितनी है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के शरीर की अवगाहना (ऊँचाई) सात धनुष प्रमाण है।
(ज्योतिषि देवों के भेद आदि का वर्णन देखें- जैनागम संस्कार, अ.13, पृ.125)

प्र.847 ज्योतिष्क देवों के विमानों संबंधी अकृत्रिम चैत्यालयों का प्रमाण कितना है?

उत्तर ज्योतिष्क देवों के विमान असंख्यात हैं और सभी विमानों में एक-एक अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं। अत: उनकी संख्या असंख्यात है। (स्वर्गादिक में रहने वाले वैमानिक देवों के भेद आदि का वर्णन देखें- जै.सं., अ.-13, पृ.127)

प्र.848 मध्यलोक से स्वर्ग विमान कितने ऊपर हैं?

उत्तर सुदर्शन मेरु पर्वत (एक लाख चालीस योजन प्रमाण वाला मध्यलोक में स्थित है; ऐसे सुमेरु पर्वत) की चूलिका से उत्तम भोगभूमिज मनुष्य के एक बाल की मोटाई प्रमाण ऊपर से स्वर्ग विमान का प्रारम्भ है।

प्र.849 स्वर्गों की सौधर्म आदि संज्ञा (नाम) क्यों है?

उत्तर स्वर्गों में सुधर्मा नामक सभा इत्यादिक के साहचर्य से सौधर्म स्वर्ग एवं शेष इन्द्रों के नाम के साहचर्य से स्वर्गों के उपर्युक्त नाम प्रचलित हैं।

प्र.850 ग्रैवेयक यह संज्ञा क्यों है?

उत्तर लोकाकाश को पुरुषाकार माना है, उस लोक रूप पुरुष के ग्रीवा-स्थानीय भाग में होने वाले विमानों को ग्रैवेयक विमान कहते हैं।

प्र.851 स्वर्गों में, स्वर्ग विमान कितने विस्तार वाले हैं?

उत्तर स्वर्गों में इन्द्रक विमान संख्यात योजन विस्तार वाले हैं। श्रेणीवत् विमान असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं और प्रकीर्णक विमानों में, कुछ संख्यात योजन विस्तार वाले और कुछ असंख्यात योजन

विस्तार वाले हैं।

प्र.852 वैमानिक देवों संबंधी पटलों की संख्या कितनी है?

उत्तर वैमानिक देवों संबंधी पटलों की संख्या त्रेसठ (६३) है।

प्र.853 वैमानिक देवों के इन्द्रक विमान कितने हैं? और वे कहाँ-कहाँ स्थित हैं?

उत्तर एक-एक पटल में एक-एक ही इन्द्रक विमान होने से इन्द्रक विमानों की संख्यात भी त्रेसठ (६३) ही है।

सौधर्म युगल में इक्तीस (३१) इन्द्रक, सानतकुमार युगल में सात (७) इन्द्रक, ब्रह्म युगल में चार (४) इन्द्रक, लान्तव युगल में दो (२) इन्द्रक, शुक्र युगल में एक (१) इन्द्रक, शतार युगल में एक (१) इन्द्रक, आनत आदि चार स्वर्गों में छः (६) इन्द्रक, तीन अधस्तन ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। तीन मध्यम ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। तीन उपरिम ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। नौ अनुदिशों में एक (१) इन्द्रक है, पाँच अनुत्तरों में एक (१) इन्द्रक विमान है।

प्र.854 स्वर्गादिक में रहने वाले वैमानिक देवों के श्रेणीबद्ध विमान किस तरह स्थित हैं?

उत्तर पैंतालीस लाख योजन प्रमाण विस्तार वाले (मनुष्य क्षेत्र के समान प्रमाण वाले) प्रथम ऋतु नामक इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में बासठ-बासठ श्रेणीबद्ध विमान हैं। इसके आगे दूसरे, तीसरे, चौथे आदि इन्द्रकों में वे उत्तरोत्तर एक-एक कम (इकसठ, साठ, उन्सठ) आदि होते हुये अनुदिश और अनुत्तर इन्द्रक विमानों की चारों दिशाओं में मात्र एक-एक ही विमान अवशेष रहते हैं। एक लाख योजन प्रमाण विस्तार वाले (जम्बूद्वीप समान प्रमाण वाले) अंतिम सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में एक-एक श्रेणीबद्ध विमान है।

(प्रथम कल्प से लेकर नवग्रैवेयक तक प्रकीर्णक विमान ही अनेक संख्या में बिखरे हुये हैं।)

प्र.855 सौधर्म कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सौधर्म कल्प में इन्द्रक आदि (इन्द्रक, श्रेणीबद्ध, प्रकीर्णक) विमान बत्तीस लाख हैं।

प्र.856 ईशान कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं ?

उत्तर ईशान कल्प में इन्द्रक आदि अट्ठाईस लाख विमान हैं।

प्र.857 सानतकुमार कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सानतकुमार कल्प में इन्द्रक आदि विमान बारह लाख हैं।

प्र.858 माहेन्द्र कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर माहेन्द्र कल्प में इन्द्रक आदि आठ लाख विमान हैं।

प्र.859 ब्रह्म कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर ब्रह्म कल्प में इन्द्रक आदि चार लाख विमान हैं।

प्र.860 लान्तव कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर लान्तव कल्प में इन्द्रक आदि पचास हजार विमान हैं।

प्र.861 महाशुक्र कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर महाशुक्र कल्प में इन्द्रक आदि चालीस हजार विमान हैं।

प्र.862 सहस्रार कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सहस्रार कल्प में इन्द्रक आदि छः हजार विमान हैं।

प्र.863 आनत आदि कल्पों में इन्द्रक आदि कितने विमान हैं?

उत्तर आनत आदि कल्पों में इन्द्रक आदि सात सौ विमान हैं।

प्र.864 अघस्तन तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं।

उत्तर अघस्तन तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान एक सौ ग्यारह हैं।

प्र.865 मध्यम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर मध्यम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान एक सौ सात हैं।

प्र.866 उपरिम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर उपरिम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान इक्यानवे हैं।

प्र.867 अनुदिशों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर अनुदिशों में इन्द्रक आदि विमान नौ हैं।

प्र.868 अनुत्तरों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर अनुत्तरों में इन्द्रक आदि विमान पाँच हैं।

प्र.869 स्वर्गादिक के संपूर्ण विमान किस आधार पर अवस्थित हैं?

उत्तर सौधर्म-ईशान कल्प के विमान जल के ऊपर अवस्थित हैं। सानत कुमार माहेन्द्र कल्पों के विमान वायु के ऊपर अवस्थित हैं। ब्रह्म स्वर्ग से लेकर सहस्रार स्वर्ग तक के विमान जल और वायु के ऊपर अवस्थित हैं। और आनतादि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त के सभी विमान शुद्ध आकाश तक अवस्थित हैं। (क.दी. भाग-3, पृ.43)

प्र.870 सौधर्म आदि कल्पों में विमानों का वर्णन किस तरह है?

उत्तर सौधर्म और ईशान कल्प के स्वर्ग विमान पाँचों वर्ण वाले हैं। तथा सानतकुमारादि युगल के विमान कृष्ण वर्ण से रहित शेष चार वर्ण वाले हैं।

प्र.871 ब्रह्म और लान्तव कल्प में विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर ब्रह्म और लान्तव कल्पों के विमान कृष्ण एवं नील वर्ण से रहित शेष तीन वर्ण वाले हैं।

प्र.872 महाशुक्र और सहस्रार कल्पों के विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर महाशुक्र और सहस्रार कल्पों में विमान कृष्ण, नील, रक्त रहित दो वर्ण वाले हैं।

प्र.873 आनतादि विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर आनतादि से लेकर अनुत्तर पर्यन्त सभी विमान कृष्ण, नील, रक्त (लाल) एवं पीत वर्ण से रहित होते

हैं; मात्र शुक्ल वर्ण वाले हैं।

प्र.874 स्वर्गों में स्थित मानस्तंभ कहाँ और किस तरह के होते हैं?

उत्तर इन्द्रों के सभा-मण्डप के आगे एक योजन विस्तीर्ण, छत्तीस योजन ऊँचा, पाद-पीठ से युक्त वज्रमय मानस्तंभ होता है। इसका आकार गोल और व्यास एक योजन का होता है। और इसमें एक-एक कोश विस्तार वाली बारह धाराएँ होती हैं तथा उन मानस्तंभों पर तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित करण्डक स्थित होते हैं।

प्र.875 कौन-से क्षेत्र के तीर्थकरों के आभरणों से कौन से मानस्तंभों के करण्डक पूरित होते हैं?

उत्तर सौधर्म स्वर्ग में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक भरत क्षेत्र संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं। ईशान स्वर्ग में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक ऐरावत क्षेत्र संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं। सानतकुमार और माहेन्द्र कल्प में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक क्रमशः पूर्व विदेह संबंधी और पश्चिम विदेह संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं।

प्र.876 स्वर्ग के इन्द्र आदि देवों का और देवांगनाओं का उत्पत्ति स्थान कहाँ पर है?

उत्तर मानस्तंभ के समीप इन्द्र का उत्पाद गृह आठ योजन लम्बा, चौड़ा और ऊँचा है। उसके मध्य में रत्नों की दो शय्यायें हैं। आरण स्वर्ग पर्यंत दक्षिण कल्पों की समस्त देवांगनाएँ सौधर्म कल्प में और अच्युत स्वर्ग पर्यंत उत्तर कल्पों की समस्त देवांगनाएँ ऐशान कल्प में ही उत्पन्न होती हैं। उत्पत्ति के बाद उपरिम कल्पों के देव अपनी-अपनी देवांगनाओं को अपने- अपने स्थान पर ले जाते हैं।

प्र.877 सौधर्म-ऐशान स्वर्गों में कितने-कितने विमानों में देव और देवांगनाओं की उत्पत्ति होती है?

उत्तर सौधर्म-ऐशान में छः लाख विमान और ऐशान स्वर्ग में चार लाख विमान शुद्ध विमान हैं; जहाँ मात्र देवांगनाओं की ही उत्पत्ति होती है। इन्हीं स्वर्गों में क्रम से छब्बीस लाख और चौबीस लाख विमानों में देव और देवांगनाओं दोनों की उत्पत्ति होती है। देवांगनाएँ मूल शरीर के साथ ही अपने नियोगी देवों के साथ जाती हैं।

प्र.878 स्वर्गादिक देव पर्याय में जन्म लेने के बाद किस प्रकार का वातावरण देखा जाता है?

उत्तर स्वर्गादिक में देव उत्पत्ति के समय वहाँ स्थित देवगण आनंद वाद्य बजाते हैं, जय-जय के अनेक स्तुतियों के शब्द करते हैं। उन शब्दों को सुनकर प्राप्त हुये वैभव और अपने परिवार को देखकर तथा अवधिज्ञान से अपने पूर्वजन्म को ज्ञात कर वे नवीन देव धर्म की प्रशंसा करते हैं तथा परम स्नान करने के बाद पट्ट रूप अभिषेक इत्यादि एवं अलंकारों को प्राप्त कर सम्यग्दृष्टि स्वयं जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक पूजन करते हैं तथा मिथ्यादृष्टि देव अन्य देव द्वारा सम्बोधे जाने के उपरांत, ये कुल देवता हैं; ऐसा मानकर जिनेन्द्र पूजन करते हैं। ये सभी देव सुखसागर में निमग्न होने के कारण अपने व्यतीत हुये काल को नहीं जान पाते।

प्र.879 कल्पवासी देव धार्मिक अनुष्ठानों में किस तरह मध्यलोक में आकर धार्मिक पुण्य लाभ प्राप्त

करते हैं?

उत्तर कल्पवासी देव तीर्थंकरों की महापूजा और उनके पञ्चकल्याणक महोत्सवों में जाते हैं किन्तु अहमिन्द्र देव तो अपने ही स्थान पर स्थित रहकर मणिमय मुकुटों पर अपने हाथों को मुकलित रूप में जोड़कर नमस्कार करते हैं। वे गर्भ और जन्मादि कल्याणकों में उत्तर शरीर से ही जाया करते हैं और उनके मूल शरीर तो सुख पूर्वक जन्म स्थानों में ही स्थित रहते हैं।

प्र.880 इन्द्रभवनों के सामने जिनेन्द्र देव के दर्शन हेतु क्या व्यवस्था होती है?

उत्तर समस्त इन्द्र भवनों के आगे न्यग्रोध वृक्ष होते हैं, इनमें एक-एक वृक्ष पृथ्वीकायिक और जम्बूवृक्ष के सदृश होते हैं। इसके मूल (मध्य) में प्रत्येक दिशा में एक-एक जिनेन्द्र प्रतिमा होती है, जिनके चरणों में इन्द्रादिक प्रणाम करते हैं, पूजन करते हैं तथा जो प्रतिमायें स्मरण मात्र से ही पाप को हरने वाली होती हैं।

प्र.881 सौधर्म-ईशान आदि इन्द्रों की एक-एक प्रधान देवी की कितनी परिवार (सहयोगी) देवियाँ होती हैं?

उत्तर सौधर्म-ऐशान संबंधी सोलह हजार, सानतकुमार-माहेन्द्र संबंधी आठ हजार, ब्रह्मेन्द्र संबंधी चार हजार, लान्तव इन्द्र संबंधी दो हजार, महाशुक्र इन्द्र संबंधी एक हजार, सहस्रार इन्द्र संबंधी पाँच सौ, आनत आदि चार इन्द्र संबंधी ढाई सौ सहयोगी देवियाँ होती हैं।

प्र.882 वैमानिक देवों के आहार संबंधी नियम क्या हैं?

उत्तर एक सागरोपम काल पर्यन्त आयु वाले देवों का दिव्य अमृतमय आहार एक हजार वर्ष में संपन्न होता है। इसी तरह जितने सागरोपम हों उतने हजार वर्ष में आहार का नियम जानना चाहिए।

प्र.883 देवगति में एक भवावतारी कौन-कौन सी भव्य आत्मायें हैं?

उत्तर देवगति में एक भवावतारी निकट भव्यात्माएँ सौधर्म इन्द्र, शचि देवी, लोकपाल (सोम, यम, वरूण और धनद-कुबेर), सनत कुमारादि दक्षिणेन्द्र, लोकान्तिक देवर्षि और सर्वार्थसिद्धि विमान में उत्पन्न होने वाले सर्वदेव अपने-अपने स्थान से आकर चतुर्थ युग संबंधी मनुष्य भव प्राप्त कर निर्ग्रंथ मुनि बन उसी पर्याय से निर्वाण को प्राप्त करते हैं।

प्र.884 वैमानिक देवों में सम्यग्दर्शन संबंधी क्या नियम है?

उत्तर वैमानिक देवों में पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्था में औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन हो सकता है। अपर्याप्त अवस्था में औपशमिक सम्यग्दर्शन; द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन के साथ मरने वाले जीवों की अपेक्षा घटित होता है। देवांगनाओं के अपर्याप्त अवस्था में एक भी सम्यग्दर्शन नहीं होता। पर्याप्त अवस्था में नवीन उत्पत्ति की अपेक्षा औपशमिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यग्दर्शन हो सकते हैं।

प्र.885 मिथ्या दृष्टि जीव देव पर्याय में कहाँ तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर मिथ्यादृष्टि जीव का उत्पाद नवम ग्रैवेयक तक हो सकता है।

प्र.886 अनुदिश और अनुत्तर विमानों में सम्यग्दर्शन का क्या नियम है?

उत्तर नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर विमानों में सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते हैं।

प्र.887 वैमानिक देवों के अवधिज्ञान का विषय क्षेत्र कितना है?

उत्तर सौधर्म-ऐशान कल्प के देव अपने अवधिज्ञान से नरक संबंधी प्रथम पृथ्वी पर्यन्त, सानतकुमार-माहेन्द्र कल्प के देव दूसरी पृथ्वी पर्यन्त, ब्रह्मादि चार स्वर्गों के देव तृतीय पृथ्वी पर्यन्त, शुक्र आदि चार स्वर्गों के देव चतुर्थ पृथ्वी पर्यन्त, आनत आदि चार स्वर्गों के देव पाँचवी पृथ्वी पर्यन्त, नौ ग्रैवेयक वासी देव छठी पृथ्वी पर्यन्त और अनुदिश एवं अनुत्तर वासी देव संपूर्ण लोक नाड़ी को देखते हैं। प्रत्येक वैमानिक देव अपने-अपने विमान के ध्वजदण्ड से ऊपर के क्षेत्र की बात नहीं जान सकते।

प्र.888 वैमानिक देवों की विक्रिया का क्षेत्र कितना है?

उत्तर वैमानिक देवों की विक्रिया का क्षेत्र उनके अवधिज्ञान क्षेत्र प्रमाण है।

प्र.889 देवगति में देवों की लेश्या का आगमानुसार वर्णन किस प्रकार है?

उत्तर भवनत्रिक (भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क) देवों की अपर्याप्त अवस्था में कृष्ण, नील, कापोत तीन अशुभ लेश्यायें हैं और पर्याप्त अवस्था में पीत लेश्या का जघन्य अंश होता है।

वैमानिक देवों की पर्याप्त-अपर्याप्त अवस्था में शुभ लेश्या ही होती हैं। जिनमें सौधर्म-ऐशान स्वर्ग में मध्यम पीत लेश्या, सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग में उत्कृष्ट पीत एवं जघन्य पद्मलेश्या, ब्रह्मादि छ:स्वर्गों में मध्यम पद्म लेश्या, शतार-सहस्रार स्वर्गों में उत्कृष्ट पद्म एवं जघन्य शुक्ल लेश्या, आनत आदि चार स्वर्गों में मध्यम शुक्ल लेश्या, ९ ग्रैवेयक में मध्यम शुक्ल लेश्या एवं ९ अनुदिश तथा ५ अनुत्तर में उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या होती है।

प्र.890 स्वर्गों में देवांगनाओं की उत्कृष्ट एवं जघन्य आयु कितनी है?

उत्तर स्वर्गा में देवांगनाओं की जघन्य आयु कुछ कम एक पल्य एवं उत्कृष्ट आयु पचपन पल्य प्रमाण होती है।

प्र.891 घातायुष्क किसे कहते हैं? और वह कहाँ तक होता है?

उत्तर जो देव अधिक स्थिति बाँधकर पश्चात् संक्लेश परिणामों के निमित्त अध:स्तन स्वर्गों में उत्पन्न होते हैं, उनके इस उत्पन्न होने को घातायुष्क कहते हैं। ऐसे देवों की उत्पत्ति सतार-सहस्रार स्वर्गों तक ही होती है। आगे के स्वर्गों में उनकी उत्पत्ति नहीं होती, इस कारण आयु के साथ कुछ अधिक का संबंध शतार-सहस्रार स्वर्ग तक ही होता है।

प्र.892 देवों में घातायुष्क की व्यवस्था का उदाहरण किस तरह घटित होता है?

उत्तर मान लीजिए किसी मनुष्य ने अपनी संयम अवस्था में अच्युत कल्प में 22 सागरोपम प्रमाण आयु का

बंध किया। पश्चात् संयम की विराधना और बाँधी हुई आयु की अपवर्तना कर असंयत सम्यग्दृष्टि हो गया। पश्चात् मरण कर यदि सहस्रार कल्प में उत्पन्न हुआ तो वहाँ की साधारण आयु; जो अठारह सागरोपम ही है, उससे घातायुष्क संबंधी देव की आयु अंतर्मुहूर्त्त कम अर्द्धसागर अधिक होगी। यदि वही पुरुष संयम की विराधना के साथ ही सम्यक्त्व की विराधना कर मिथ्यादृष्टि हो जाता है और पश्चात् मरण कर उसी सहस्रार कल्प में उत्पन्न होता है तो उसकी आयु वहाँ की निश्चित अठारह सागर की आयु से पल्य के असंख्यातवें भाग से अधिक होगी। ऐसे जीव को घातायुष्क मिथ्यादृष्टि कहते हैं। (क.दी.भाग-3)

प्र.893 कौन-से जीव वैमानिक देवों में कहाँ तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर असंयत सम्यग्दृष्टि और देशसंयमी मनुष्य और तिर्यंच सोलहवें स्वर्ग तक उत्पन्न हो सकते हैं। जो मुनि द्रव्य से (शारीरिक बाहरी मुद्रा से) निर्ग्रन्थ अवस्था के धारक हैं और भाव से वे मिथ्यादृष्टि हुये हों अथवा वे मुनि असंयत सम्यग्दृष्टि हुये हों अथवा वे मुनि देशसंयमी हुये हों अर्थात् उन मुनि का गुणस्थान पहला या चौथा या पंचम हो गया है ऐसे वे मुनि अंतिम ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं। सम्यग्दृष्टि महाव्रती मुनि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं। सम्यग्दृष्टि भोगभूमिज मनुष्य व तिर्यञ्च सौधर्म-ऐशान स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं। और मिथ्यादृष्टि भोगभूमिज मनुष्य व तिर्यञ्च एवं तापसी (अन्यमती) साधु उत्कृष्टता से भवनत्रिक पर्यन्त ही उत्पन्न हो सकते हैं। चरक और परिव्राजक संन्यासी ब्रह्म कल्प (स्वर्ग) पर्यन्त और आजीवक साधु अच्युत कल्प उत्पन्न हो सकते हैं। अर्थात् अन्य लिंगियों का (जैन मत से भिन्न भेषधारियों का) उत्पाद सोलहवें स्वर्ग से आगे नहीं होता तथा स्त्रियों का उत्पाद भी सोलहवें स्वर्ग तक ही हो सकता है।

प्र.894 वैमानिक देवों की सामर्थ्य (शक्ति) कितनी होती है?

उत्तर वैमानिक देवों में एक पल्योपम प्रमाण आयु वाला देव पृथ्वी के छः खण्डों को उखाड़ने में, उनमें स्थित मनुष्यों-तिर्यञ्चों का हनन और पोषण करने में समर्थ होता है। और सागरोपम प्रमाण काल पर्यन्त जीवित रहने वाला देव जम्बूद्वीप को पलटने और उसमें स्थित मनुष्य और तिर्यञ्चों का हनन और पोषण करने में समर्थ होता है।

प्र.895 देवगति के किन देवों का जन्म तिर्यञ्चों की एकेन्द्रिय पर्याय में हो सकता है?

उत्तर देवगति के ईशान स्वर्ग पर्यन्त देवों का जन्म एकेन्द्रिय पर्याय में हो सकता है।

प्र.896 देवगति के कौन-से देव संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याय में ही उत्पन्न होते हैं?

उत्तर देवगति के सानतकुमार स्वर्ग से लेकर सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त के देव संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य व तिर्यञ्च ही होते हैं।

प्र.897 तिर्यञ्च पर्याय में कौन-से देव उत्पन्न नहीं होते हैं?

उत्तर तिर्यञ्च पर्याय में तेरहवे स्वर्ग से लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त देव उत्पन्न नहीं होते हैं। अर्थात् वे शुक्ल

लेश्या के साथ मनुष्य में ही उत्पन्न होते हैं।

प्र.898 देवगति के देव क्या भोगभूमि में उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर नहीं! देवगति के देव मरण कर भोगभूमि में उत्पन्न नहीं हो सकते हैं।

प्र.899 सर्वार्थसिद्धि विमान से ईषत् प्राग्भार पृथ्वी (सिद्धशिला) कितने ऊपर स्थित है?

उत्तर सर्वार्थसिद्धि के इन्द्रक विमान के ध्वजदण्ड से बारह योजन प्रमाण ऊपर जाकर कोई ईषत् प्राग्भार नामक आठवीं पृथ्वी अवस्थित है।

प्र.900 इषत् प्राग्भार नामक पृथ्वी से कितने ऊपर जाकर सिद्धों का निवास है?

उत्तर ईषत् प्राग्भार नामक पृथ्वी से ऊपर सात हजार पचास धनुष जाकर सिद्धों का निवास है। अर्थात् अष्टम पृथ्वी से ऊपर लोक के अन्त में चार हजार धनुष मोटा घनोदधि वातवलय है, दो हजार धनुष मोटा घनवातवलय है, और १५७५ धनुष मोटा तनुवातवलय है। सिद्ध परमेष्ठी तनुवातवलय में रहते हैं, इनकी उत्कृष्ट अवगाहना ५२५ धनुष है। वातवलयों के प्रमाण नय से उत्कृष्ट अवगाहना घटा देने पर अष्टम पृथ्वी से कितने योजन ऊपर सिद्धों का निवास है यह प्रमाण प्राप्त हो जाता है।

प्र.901 सिद्धों के निवास क्षेत्र के व्यास का प्रमाण कितना है?

उत्तर सिद्धों के निवास क्षेत्र के व्यास का प्रमाण मनुष्य लोक के समान पैंतालीस लाख योजन है।

प्र.902 सिद्धों की अवगाहना कितनी होती है?

उत्तर सिद्धों के आत्मप्रदेशों की अवगाहना अंतिम शरीर से किञ्चित् न्यून होकर पाँच सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट, साढ़े तीन हाथ जघन्य और मध्यम अनेक प्रकार की यथायोग्य रूप से होती है।

प्र.903 सिद्धों का सुख कैसा और कितना अनुपम होता है?

उत्तर संसार में चक्रवर्तियों के सुख से भोगभूमि स्थित जीवों का सुख अनंतगुणा है। भोगभूमिज जीवों से धरणेन्द्र का सुख अनंतगुणा है। धरणेन्द्र से स्वर्गिज देवेन्द्रों का सुख अनंतगुणा है। स्वर्गिज देवेन्द्रों से अहमिन्द्र का सुख अनंतगुणा है। अहमिन्द्रों या इन सबके त्रिकालवर्ती सुख से भी सिद्धों का एक क्षण का सुख अनंतगुणा है अर्थात् उनके सुख की कोई तुलना या उपमा नहीं है वह अतिशय-अनुपम है।

प्र.904 सुख कितने प्रकार का होता है?

उत्तर सुख मुख्यत: दो प्रकार का होता है- एक अभ्युदय और एक मोक्ष।

प्र.905 अभ्युदय सुख किसे कहते हैं?

उत्तर स्वर्गिक या चक्रवर्ती आदि राजाओं के सुख को अभ्युदय का सुख कहते हैं।

प्र.906 मोक्ष सुख किसे कहते हैं?

उत्तर अतीन्द्रिय अनंत आत्मिक सुख को मोक्ष सुख कहते हैं।

प्र.907 संक्षेप और ओह किसे कहते हैं?

उत्तर संक्षेप और ओह यह गुणस्थान की संज्ञा (नाम) है।

प्र.908 गुणस्थान कैसे उत्पन्न होते हैं?

उत्तर गुणस्थान मोह तथा योग से उत्पन्न होते हैं।

प्र.909 विस्तार तथा आदेश किसे कहते हैं?

उत्तर विस्तार तथा आदेश ये मार्गणा की संज्ञा हैं।

प्र.910 मार्गणा कैसे उत्पन्न हाती हैं?

उत्तर मार्गणा अपने-अपने योग्य कर्मों के उदय आदि से उत्पन्न होती हैं।

प्र.911 सामान्य और विशेष किसे कहते हैं?

उत्तर एक अपेक्षा से गुणस्थान की सामान्य और मार्गणा की विशेष संज्ञा है। (गुणस्थानों का वर्णन देखिये जै.सं.अ.-१८ पृ. १८१)

प्र.912 प्ररूपणा किसे कहते हैं?

उत्तर चौदह गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपभोग का जिसमें प्ररूपण किया जाये उसे बीस प्ररूपणा कहते हैं। [प्ररूपणाओं के साथ ध्यान, आश्रव, जाति और कुलकोटि को मिला देने से चौबीस ठाना कहलाते हैं। आश्रव एवं ध्यान का वर्णन आगे अनुयोगों में किया जावेगा।]

प्र.913 प्रथम गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर प्रथम गुणस्थान में (कर्म के उदय से होने वाले) औदयिक भाव होते हैं। (गो.जी.का.११)

प्र.914 द्वितीय गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर द्वितीय गुणस्थान में कर्म निरपेक्ष पारिणामिक भाव होते हैं।

प्र.915 मिश्र गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर मिश्र गुणस्थान में कर्म के क्षयोपशम से होने वाले क्षायोपशमिक भाव होते हैं।

प्र.916 चतुर्थ गुणस्थान में कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर चतुर्थ गुणस्थान में कर्म के उपशम से होने वाजे औपशमिक, कर्म के क्षय से होने वाले क्षायिक और क्षायोपशमिक इस प्रकार ये तीन भाव होते हैं।

प्र.917 देशविरत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत इन गुणस्थानों में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर इन तीनों गुणस्थानों में चारित्रमोहनीय की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव होते हैं।

प्र.918 अप्रमत्त विरत से ऊपर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और उपशांत मोह इन गुणस्थानों में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर इन 8 वें, 9 वें, 10 वें और 11 वें गुणस्थानों में (उपशम श्रेणी में) चारित्र मोहनीय कर्म के उपशम की अपेक्षा औपशमिक भाव ही होते हैं।

प्र.919 अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और क्षीणमोह इन गुणस्थानों में कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर इन चार गुणस्थानों में (क्षपक श्रेणी में) चारित्र मोहनीय के क्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव होते हैं।

प्र.920 सयोगकेवली, अयोग केवली और सिद्धों की अपेक्षा कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर इन अवस्थाओं में कर्मक्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव होते हैं।

प्र.921 गुणस्थानों में औदयिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-उदय की अपेक्षा औदायिक भाव प्रथम गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.922 गुणस्थानों में क्षायोपशमिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-क्षयोपशम की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव प्रथम गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.923 गुणस्थानों में क्षायिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-क्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव चतुर्थ गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक तथा गुणस्थानीत सिद्धों में भी पाये जाते हैं।

प्र.924 गुणस्थानों में औपशमिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म उपशम की अपेक्षा औपशमिक भाव चतुर्थ गुणस्थान से लेकर ग्यारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.925 गुणस्थानों में पारिणामिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्मनिरपेक्ष पारिणामिक भावों में से जीवत्व और अभव्यत्व भाव मात्र प्रथम गुणस्थान तक, जीवत्व और भव्यत्व भाव चौदहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.926 सिद्धों में कौन-सा पारिणामिक भाव पाया जाता है?

उत्तर सिद्धों में कर्म-निरपेक्ष पारिणामिक भावों में से मात्र, जीवत्व-भाव पाया जाता है। (गो.क.का.गा. ८२१)

प्र.927 किसी मत में सिद्धों के जीवत्व भाव क्यों नहीं माना गया? और आगम से कैसे माना गया है?

उत्तर किसी मत से द्रव्य रूप दस प्राणों के अभाव में सिद्धों के जीवत्व भाव को स्वीकार नहीं किया गया है परंतु आगम में सिद्धों के ज्ञान-दर्शन रूप भाव प्राणों का सद्भाव होने से जीवत्व रूप पारिणामिक भाव को स्वीकार किया गया है। अर्थात् मुख्य नय से भी सिद्ध भगवान जीव हैं। इसमें कोई दोष नहीं है, क्योंकि ज्ञान-दर्शन रूप भाव प्राणों का अनुभव करने से वर्तमान में भी जीवत्व से युक्त हैं।

प्र.928 मिथ्यादृष्टि जीव के श्रद्धान में विपरीतपता किस तरह की होती है?

उत्तर मिथ्यादृष्टि जीव समीचीन गुरुओं के पूर्वापर विरोधादि दोषों से रहित और हित के करने वाले वचनों का भी यथार्थ श्रद्धान नहीं करता। किन्तु इसके विपरीत आचार्याभासों (मिथ्या आचार्यों) के द्वारा उपदष्टि या अनुपदिष्ट असद्भाव का अर्थात् पदार्थ के विपरीत स्वरूप का इच्छानुसार श्रद्धान करता

है। (गो.सा.जी.का.गा.१८)

प्र.929 मिथ्यादृष्टि के कितने भेद हैं?

उत्तर मिथ्यादृष्टि के दो भेद हैं। 1. स्वस्थान मिथ्यादृष्टि 2. सातिशय मिथ्यादृष्टि जो जीव मिथ्यात्व में लवलीन है उसे स्वस्थान मिथ्यादृष्टि कहते हैं। सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव के जो अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम होते हैं उससे मुक्त जीव को सातिशय मिथ्यादृष्टि कहते हैं। (क.दी.भा-१)

प्र.930 अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर जहाँ सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणामों से समान और असमान दोनों तरह के हों उसे अध:प्रवत्तकरण, जहाँ सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम समान और असमान दोनों तरह के और भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम असमान ही हों उसे अपूर्वकरण तथा जहाँ एक समयवर्ती अनेक जीवों के परिणामों में (विशुद्धि की अपेक्षा) निवृत्ति-भेद नहीं पाया जावे, परन्तु भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणामों में सर्वथा भेद ही पाया जावे उसे अनिवृत्तिकरण जानना चाहिए।

प्र.931 जीव को सासादन गुणस्थान कब प्राप्त होता है?

उत्तर प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के अंतमुहूर्त्त मात्र काल में से जब जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट छ: आवली प्रमाण काल शेष रहे, उतने काल में अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी के भी उदय में आने से सम्यक्त्व की विराधना होने पर सम्यग्दर्शन की जो अव्यक्त अतत्व-श्रद्धान रूप परिणति होती है, उसे सासादन गुणस्थान कहते हैं। अथवा अनंतानुबंधी कषाय में से किसी एक का उदय आने पर सम्यक्त्व परिणामों के छूटने पर और मिथ्यात्व प्रकृति का उदय न होने से, मिथ्यात्व परिणाम न होने पर मध्य के काल में जो परिणाम होते हैं उसे सासादान गुणस्थान कहते हैं। (क.दी.भा-१)

प्र.932 चारित्रमोहनीय के भेद रूप अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यक्त्व का घात कैसे करती है?

उत्तर अनन्तानुबन्धी कषाय में सम्यक्त्व और चारित्र दोनों के घात करने का स्वभाव है अर्थात् वह द्वि-स्वभाव वाली है। यह कषाय सम्यक्त्व का घात भी करती है और अप्रत्याखनावरणादि कषायों का अनन्त प्रवाह भी बनाये रखती है, इस तरह अनन्तानुबन्धी कषाय का द्विस्वभावपना सिद्ध होने से सासादान गुणस्थान की पृथक् सिद्धि होती है।

प्र.933 सम्यग्मिथ्यात्व (मिश्र) गुणस्थानवर्ती जीव द्वारा प्राप्ति के अयोग्य स्थान कौन-से हैं?

उत्तर मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव सकलसंयम या देशसंयम को धारण नहीं कर सकता। मिश्र गुणस्थान में नवीन आयु का बंध नहीं होता तथा मिश्र गुणस्थानवर्ती का मारणान्तिक समुद्घात और मरण भी नहीं होता है।

प्र.935 असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान में श्रद्धान की अपेक्षा क्या विशेषता है?

उत्तर सम्यग्दृष्टि जीव आचार्यों के द्वारा उपदिष्ट प्रवचन का श्रद्धान करता है किन्तु स्वयं के अज्ञानवश गुरु के उपदेश से, विपरीत अर्थ का भी श्रद्धान कर लेता है, तो भी वह सम्यग्दृष्टि ही है।

सूत्र के आश्रय से आचार्यादि के द्वारा आगम दिखाकर समीचीन पदार्थ के समझाने पर भी यदि वह जीव पूर्व में अज्ञान से किये हुए अतत्त्व श्रद्धान को न छोड़े तो वह जीव उसी काल से मिथ्यादृष्टि कहा जाता है। (गो.सा.जी.का. गा.२७, २८)

प्र.935 क्षायोपशमिक या वेदक सम्यग्दर्शन के प्रकरण में जो उदयाभावीक्षय कहा जाता है, उसका अर्थ क्या है?

उत्तर उदयाभावी क्षय का अर्थ है कि बिना फल दिये ही सर्वघाति (अनन्तानुबंधी चतुष्क, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व) प्रकृतियों के वर्तमान निषेकों की बिना फल दिये ही निर्जरा होना है।

प्र.936 प्रमाद के पन्द्रह भेद कौन-से होते हैं?

उत्तर चार विकथाएँ-स्त्रीकथा, भक्त (भोजन) कथा, राष्ट्रकथा, अवनिपाल (राजा) कथा। चारकषाएँ-क्रोध, मान, माया, लोभ। पंचइन्द्रिय-स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र। एक निद्रा (पांच निद्राओं में से कोई एक)। एक प्रणय (स्नेह) इस तरह कुल पन्द्रह- प्रमाद होते हैं।

प्र.937 अप्रमत्तविरत गुणस्थान के कितने भेद हैं?

उत्तर अप्रमत्तविरत गुणस्थान के स्वस्थान अप्रमत्त और सातिशय अप्रमत्त रूप दो भेद होते हैं।

प्र.938 स्वस्थान अप्रमत्त किसे कहते हैं?

उत्तर जो प्रमाद रहित साधु धर्म-ध्यान में लवलीन (षट्-आवश्यक आदि मूलगुणों एवं स्वाध्याय-तत्त्वचिंतवनादि में तत्पर) रहते हैं उन्हें स्वस्थान अप्रमत्त विरत गुणस्थानवर्ती कहते हैं।

प्र.939 सातिशय अप्रमत्त किसे कहते हैं?

उत्तर जो अप्रमत्तविरत उपशमश्रेणी अथवा क्षपक श्रेणी चढ़ने के अभिमुख होता हुआ चारित्र मोह की इक्कीस प्रकृतियों का उपशम या क्षय करने में निमित्तभूत तीन करणों में सर्व प्रथम अध:करण परिणाम को करता है वह साधु सातिशय अप्रमत्तवर्ती गुणस्थान वाला कहलाता है।

प्र.940 श्रेणी चढ़ने का पात्र कौन होता है?

उत्तर सातवें गुणस्थानवर्ती क्षायिक सम्यग्दृष्टि और द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि ही श्रेणी चढ़ सकते हैं।

प्र.941 कौन-से सम्यग्दृष्टि कौन-सी श्रेणी चढ़ सकते हैं और कौन-से सम्यग्दृष्टि श्रेणी नहीं चढ़ सकते हैं?

उत्तर क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी भी चढ़ सकता है और क्षपक श्रेणी भी चढ़ सकता है किन्तु द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि केवल उपशम श्रेणी ही चढ़ सकता है, क्षपक श्रेणी नहीं चढ़ सकता तथा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि और क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि श्रेणी नहीं चढ़ सकते हैं।

प्र.942 पुन: प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा क्षायोपशमिक सम्यक्त्व वाला जीव किस विधि से श्रेणी चढ़ने का पात्र बन सकता है?

उत्तर सर्व प्रथम; प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाला प्रथमोपशम सम्यक्त्व को छोड़कर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व को ग्रहण करे। फिर अध:करण,; अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों के द्वारा पहले अनन्तानुबन्धी कषाय का विसंयोजन करे और अन्तर्मुहूर्त्तकाल तक का; विश्राम लेकर पुन: अध:करण आदि रूप परिणामों के द्वारा या तो दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियों का उपशम करके द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो जाये या उनका क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाये। तब श्रेणी चढ़ने का पात्र हो सकता है।

प्र.943 विसंयोजन किसे कहते हैं?

उत्तर अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ के कर्म परमाणुओं को अन्य बारह और नोकषाय रूप परिणमाने (बदलने) को विसंयोजन कहते हैं।

प्र.944 मुनिराज द्वारा उपशमश्रेणी अधिक से अधिक कितनी बार प्राप्त की जा सकती है?

उत्तर मुनिराज द्वारा उपशम श्रेणी अधिक से अधिक चार बार प्राप्त की जा सकती है, परन्तु एक भव में दो बार ही प्राप्त की जाती है। पाँचवी बार नियम से मोक्ष प्राप्त करने वाली क्षपक श्रेणी ही होती है।

प्र.945 भव्यात्माओं के अपूर्वकरण परिणामों द्वारा कौन-कौन-से आवाश्यक कार्य होते हैं?

उत्तर भव्यात्माओं के अपूर्वकरण परिणामों द्वारा चार आवश्यक कार्य होते हैं। प्रथम गुणश्रेणी निर्जरा, द्वितीय गुणसंक्रमण, तृतीय स्थिति खण्डन और चतुर्थ अनुभाग खण्डन ये चारों ही कार्य पूर्ववद्ध कर्मों में होते हैं। इन परिणामों के द्वारा जीव मोहनीय कर्म की इक्कीस प्रकृतियों का क्षपण, उपशमन करने के लिए उद्यत होते हैं।

प्र.946 गुणश्रेणी निर्जरा का स्वरूप क्या है?

उत्तर जीवों के गुणित रूप से उत्तरोत्तर समयों में कर्म परमाणुओं का झरना (निर्जरित होना) गुणश्रेणी निर्जरा कहलाती है। जैसे किसी जीव के पहले समय में दस कर्म परमाणु उदय में आये, फिर दूसरे समय में दस × असंख्यात परमाणु उदय में आये इसी तरह तीसरे, चौथे आदि समयों में लगातार असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे कर्मपरमाणुओं का उदय में आना गुणश्रेणी निर्जरा है।

प्र.947 चतुर्थ गुणस्थान में क्या निरन्तर असंख्यात गुणी निर्जरा होती है?

उत्तर नहीं, चतुर्थ असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान में असंख्यात गुणी निर्जरा कदापि नहीं होती, बल्कि कहते हैं कि करणलब्धि के काल मात्र में असंख्यात गुणी निर्जरा होती है।

प्र.948 असंख्यात गुणी निर्जरा का प्रारम्भ कौन-से स्थान से प्रारम्भ होता है?

उत्तर असंख्यात गुणी निर्जरा का प्रारम्भ संयम (व्रत) से होता है। सिद्धांत ग्रन्थों के अनुसार पंचम गुणस्थान (देशसंयत स्थान) से निरन्तर गुण-श्रेणी रूप असंख्यातगुणी निर्जरा प्रारम्भ होती है। (धवल पु. ८/८३, ज.ध.पु.१२)

प्र.949 गुणसंक्रमण किसे कहते हैं?

उत्तर जहाँ पर प्रति समय असंख्यात गुणश्रेणीक्रम से परमाणु प्रदेश अन्य प्रकृति रूप परिणमें, उसे

गुणसंक्रमण कहते हैं।

प्र.950 स्थितिखण्डन किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों की स्थिति के उपरिम अंश, खण्ड या पोरों को खरोंचकर नष्ट कर देने को स्थिति-खण्डन या स्थिति काण्डकघात कहते हैं।

प्र.951 अनुभाग खण्डन किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों के अनुभाग के उपरिम अंश, खण्ड या पोरों को खरोंचकर नष्ट कर देने को अनुभाग खण्डन या अनुभाग काण्डकघात कहते हैं।

प्र.952 स्थितिखण्डन या अनुभाग खण्डन से जीवों को क्या लाभ है?

उत्तर विशुद्ध परिणामों द्वारा स्थिति खण्डन या अनुभाग खण्डन करने से जीवों का स्थिति सत्त्व व अनुभाग सत्त्व हीन हो जाता है।

प्र.953 पूर्व स्पर्धक किन्हें कहते हैं?

उत्तर जो स्पर्धक अनिवृत्ति करण गुणस्थान के पूर्व में पाये जाते हैं, उनको पूर्व स्पर्धक कहते हैं।

प्र.954 अपूर्वस्पर्धक किन्हें कहते हैं?

उत्तर अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों के निमित्त से जिनका अनुभाग अनन्तगुणा क्षीण कर दिया जाता है उनको अपूर्व स्पर्धक कहते हैं।

प्र.955 बादरकृष्टि किन्हें कहते हैं?

उत्तर जिनका अनुभाग अपूर्वस्पर्धक से भी अनन्तगुणा क्षीण हो जाता है उनको बादरकृष्टि कहते हैं।

प्र.956 सूक्ष्मकृष्टि किन्हें कहते हैं?

उत्तर जिनका अनुभाग बादरकृष्टि से भी अनन्तगुणा क्षीण हो जाता है उनको सूक्ष्मकृष्टि कहते हैं। (ये सभी कार्य नवम गुणस्थान में होते हैं।)

प्र.957 अनुभाग किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों के फल देने की शक्ति को अनुभाग कहते हैं।

प्र.958 अविभाग प्रतिच्छेद किसे कहते हैं?

उत्तर अनुभाग शक्ति के सबसे छोटे अंश को अविभाग प्रतिच्छेद कहते हैं।

प्र.959 समय प्रबद्ध किसे कहते हैं?

उत्तर संसारावस्था में प्रतिसमय बँधने वाले कर्म या नोकर्म के समस्त परमाणुओं के समूह को समयप्रबद्ध कहते हैं।

प्र.960 वर्ग किसे कहते हैं?

उत्तर विवक्षित समयप्रबद्ध में सबसे कम अनुभाग शक्ति के अंश अर्थात् अविभाग प्रतिच्छेद जिस परमाणु में पाये जाते हैं, उसे वर्ग कहते हैं।

प्र.961 वर्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर समान संख्यावाले अविभाग प्रतिच्छेद जिनमें पाये जायें, उन सब वर्गों के समूह को वर्गणा कहते हैं।

प्र.962 स्पर्धक किसे कहते हैं?

उत्तर जिनमें अविभागी प्रतिच्छेदों की समान वृद्धि पायी जाय उन वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं।

प्र.963 उपशान्त-कषाय और क्षीणकषाय गुणस्थान में क्या अन्तर है?

उत्तर उपशान्त-कषाय जीव के यद्यपि मोह का उदय नहीं है फिर भी मोहनीय कर्म की सत्ता है किन्तु क्षीणकषाय जीव के मोहनीय कर्म का उदय भी नहीं है और अस्तित्व भी नहीं है। फिर भी दोनों के ही परिणामों में कषायों का अभाव है अत: दोनों के यथाख्यात चारित्र होता है और दोनों ही बाह्य और अभ्यन्तर परिग्रहों से रहित होने के कारण निर्ग्रन्थ कहे जाते हैं।

प्र.964 तेरहवें गुणस्थान में केवली भगवान को कौन-सी नव लब्धियों का अपूर्व लाभ होता है?

उत्तर केवली भगवान को क्षायिक-सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक-ज्ञान, क्षायिक-दर्शन, क्षायिक-दान, क्षायिक-लाभ, क्षायिक-भोग, क्षायिक-उपभोग और क्षायिक-वीर्य (शक्ति) इन नव लब्धियों का अपूर्व लाभ प्राप्त होता है।

प्र.965 गुणस्थानों में संसारी जीव किस क्रम-रीति से चढ़ता-उतरता है?

उत्तर 1. अनादि मिथ्यादृष्टि जीव करणलब्धि के प्रभाव से सम्यक्त्वघातक प्रकृतियों के उपशम से असंयत सम्यग्दृष्टि नामक चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

2. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

3. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से मिश्र नामक तीसरे गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

4. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व एवं पाँच पापों के एकदेशत्याग रूप परिणामों से देशविरत नामक गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

5. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व एवं प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से होने वाले चारित्र रूप परिणाम से अप्रमत्तविरत नामक सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं।

(तात्पर्य यह है कि मिथ्यादृष्टि जीव सीधे सासादन और प्रमत्तविरत गुणस्थानों को प्राप्त नहीं करते हैं।)

6. सासादन गुणस्थानवर्ती जीव ऊपर सम्बन्धी किसी भी गुणस्थान को प्राप्त नहीं होते बल्कि नियम से मिथ्यात्व गुणस्थान को ही प्राप्त करते हैं।

7. मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव सम्यक्त्व-प्रकृति के उदय से चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं अथवा मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

8. अविरत सम्यक्त्व गुणस्थानवर्ती उपशम सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से वेदक (क्षायोपशमिक) सम्यक्त्व को प्राप्त करते हैं।

9. वेदक सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना और दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृतियों का

अर्थात् सप्त प्रकृतियों का क्षय होने पर क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त करते हैं।

10. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से पंचम गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

11. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से सप्तम गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

12. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव मिश्र प्रकृति के उदय से तीसरे गुणस्थान को, अनन्तानुबन्धी के उदय से दूसरे गुणस्थान को और मिथ्यात्व के उदय से प्रथम गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

13. पंचम गुणस्थानवर्ती जीव प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं। इस गुणस्थानवर्ती जीव अविशुद्धि के योग से नीचे के चारों गुणस्थानों को भी प्राप्त हो सकते हैं।

14. षष्ठ-गुणस्थानवर्ती जीव नीचे के पाँचों गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं।

15. षष्ठ-गुणस्थानवर्ती जीव अप्रमत्तविरत गुणस्थान पर्यन्त जाते हैं, उससे ऊपर नहीं जाते हैं।

16. सप्तम गुणस्थानवर्ती जीव अपूर्वकरण को, छठे गुणस्थान को और मरण की अपेक्षा देवगति सम्बन्धी चतुर्थ गुणस्थान को (इस तरह तीन गुणस्थानों) को प्राप्त होते हैं। उपशम श्रेणी वाले आठवें नौवें एवं दसवें गुणस्थानवर्ती जीव चढ़ने की अपेक्षा अनन्तर ऊपर के ग्यारहवें गुणस्थान तक, गिरने की अपेक्षा अनन्तर नीचे (दसवें आदि) और मरण की अपेक्षा देवगति सम्बन्धी चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

17. ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जीव गिरने की अपेक्षा दसवें आदि निचले और मरण की अपेक्षा चौथे गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

18. क्षपकश्रेणी वाले जीव आठवें और नौवें गुणस्थानवर्ती जीव चढ़ने की अपेक्षा अनन्तर ऊपर के दसवें गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

19. क्षपक क्षेणी वाले जीव दसवें गुणस्थानवर्ती जीव नियम से बारहवें गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं और वहाँ से क्रम से आगे के गुणस्थानों को प्राप्त होते हुए मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्र.966 मरण किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर तृतीय गुणस्थान तथा क्षपकश्रेणी के चारों गुणस्थान और तेरहवें गुणस्थान को छोड़कर शेष गुणस्थानों में मरण होता है।

प्र.967 किस गुणस्थान में मरणकर जीव किस गति को प्राप्त होता है?

उत्तर प्रथम और चतुर्थ गुणस्थान से मरणकर जीव चारों गतियों में से किसी भी गति में जा सकता है। सासादन गुणस्थान में मरणकर जीव नरक गति में नहीं जाता। चौदहवें गुणस्थान से निर्वाण होता है (अर्थात् पण्डित-पण्डित मरण होता है) और शेष सात गुणस्थानों से मरण कर जीव नियम से देवगति में जन्म लेता है।

प्र.968 किन-किन अवस्थाओं में जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं?

उत्तर 1. मिश्र गुणस्थान वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

2. निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था को धारण करने वाले मिश्रकाययोगी जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

3. क्षपकश्रेणी सम्बन्धी आठवें, नौंवें, दसवें एवं बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव मरण को प्राप्त नहीं होते।

4. उपशम श्रेणी चढ़ते हुए जीव अपूर्वकरण गुणस्थान के प्रथम भाग वाले (जब तक निद्रा और प्रचला की बन्ध-व्युच्छित्ति नहीं होती है) मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

5. प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

6. तेरहवें गुणस्थान वाले जीव (केवली) मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

7. सातवें नरक के द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ गुणस्थान वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

8. अनन्तानुबन्धी कषाय की विसंयोजना करके मिथ्यात्व को प्राप्त होने वाले जीव अन्तर्मुहूर्त्त तक मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

9. क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव जब तक मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क का क्षय नहीं कर देता है अर्थात् जब तक कृतकृत्यता (या कृतकृत्य वेदकता) रहती है तब तक मरण को प्राप्त नहीं होते हैं। (जयधवला पु.२, २१५ से २२०)

१०. सिद्ध जीव सांसारिक जन्म मरण से रहित होते हैं। (गुणस्थान चार्ट देखिये जै.सं.अ.१८ पृ.१८६)

प्र.969 कौन-से मत से कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि का मरण होता है?

उत्तर लब्धिसार के मत से कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि का मरण होता है।

प्र.970 कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि जीव मरकर कहाँ-कहाँ उत्पन्न नहीं होते हैं?

उत्तर कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्व का काल अन्तर्मुहूर्त्त है, जिस काल के व्यतीत होते ही जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि बन ही जाता है। उस अन्तर्मुहूर्त्त चार भागों में से प्रथम भाग में मरण प्राप्त जीव देवों में, दूसरे भाग मरण प्राप्त जीव देवों और मनुष्यों में, तीसरे भाग में मरण प्राप्त जीव देव, मनुष्य और तिर्यञ्चों में तथा चौथे भाग में मरण प्राप्त जीव चारों गतियों में से किसी भी गति में उत्पन्न होते हैं।

प्र.971 चौदह गुणस्थानों में आयुकर्म को छोड़कर अन्य सातकर्मों की गुणश्रेणी निर्जरा (असंख्यात गुणी निर्जरा) किस प्रकार होती है?

उत्तर सम्यक्त्व उत्पत्ति काल अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि, श्रावक, विरत, अनन्तानुबन्धी कर्म का विसंयोजन करने वाला, दर्शनमोहनीय कर्म का क्षय करने वाले, कषायों का उपशम करने वाले ८, ९, १०वें गुणस्थानवर्ती जीव, उपशान्त कषाय, कषायों का क्षपण करने वाले ८, ९, १० वें गुणस्थानवर्ती जीव, क्षीणमोह, सयोग केवली और अयोग केवली जिन, इन ग्यारह स्थानों में द्रव्य की अपेक्षा कर्मों की निर्जरा क्रम से असंख्यातगुणी असंख्यातगुणी (गुणश्रेणी) अधिक अधिक होती जाती है।

प्र.972 क्या आगे-आगे के गुणस्थानों में निर्जरा के समान निर्जरा का काल भी अधिक-अधिक है?

उत्तर नहीं, निर्जरा से निर्जरा होने का काल विपरीत है। क्रम से उत्तरोत्तर संख्यात गुणा-संख्यातगुणा हीन है।

प्र.973 अयोगकेवली गुणस्थान में केवली भगवान की क्या विशेषता है?

उत्तर जो अठारह शीलों के स्वामी हैं, जिनके कर्मों के आश्रव का द्वार बंद हो गया है तथा सत्त्व और उदय रूप अवस्था को प्राप्त कर्म रूप रज की सर्वथा निर्जरा होने से जो उस कर्म से सर्वथा मुक्त होने के सम्मुख हैं, ऐसे योग रहित केवली, चौदहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान होते हैं।

प्र.974 गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान का स्वरूप कैसा है?

उत्तर जो ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मों से रहित हैं, अनन्तसुख रूपी अमृत का अनुभव करने वाले शांतिमय हैं, नवीन कर्मबंध के कारणभूत मिथ्यादर्शनादि भाव कर्म रूपी अंजन से जो रहित हैं, जो नित्य हैं, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु ये आठ मुख्य गुण जिनके प्रकट हो चुके हैं, जो कृतकृत्य हैं अर्थात् जिनको कोई कार्य करना शेष नहीं है और जो लोक के अग्रभाग में निवास करने वाले हैं उसको सिद्ध भगवान कहते हैं।

प्र.975 जीवसमास किन्हें कहते हैं?

उत्तर जिनमें जीव तथा जीव के भेद-प्रभेद समाहित किये जाते हैं वे जीवसमास कहलाते हैं।

प्र.976 जीवसमास के मुख्यत: कितने भेद हैं?

उत्तर जीवसमास अनेक भेद वाले होते हुए भी मुख्यत: चौदह, उन्तीस, सत्तावन और अण्ठानवे भेदों से विशेष प्रचलित हैं।

प्र.977 जीवसमास के चौदह भेद कौन-से हैं?

उत्तर एकेन्द्रिय जीव के दो भेद-बादर और सूक्ष्म। विकलत्रय जीव के तीन भेद-द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय। पंचेन्द्रिय जीव के दो भेद- सैनी और असैनी। इस प्रकार इन सातों भेदों के पर्याप्त और अपर्याप्त की अपेक्षा दो-दो भेद और करने पर जीवसमास के चौदह भेद कहे जाते हैं।

प्र.978 जीवसमास के उन्नीस भेद कौन-से हैं?

उत्तर स्थावर के पृथिवी, जल, अग्नि और वायु कायिक एवं नित्य निगोद तथा इतरनिगोद इन छह प्रकार के जीवों के बादर और सूक्ष्म की अपेक्षा दो-दो भेद, प्रत्येक वनस्पति के सप्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित की अपेक्षा दो भेद इस प्रकार एकेन्द्रिय जीव के चौदह भेद हुए। उनमें त्रस सम्बन्धी द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, सैनी और असैनी पंचेन्द्रिय के पाँच भेद मिलाने पर जीवसमास के उन्नीस भेद कहे जाते हैं।

प्र.979 जीवसमास के सत्तावन भेद कौन-से हैं?

उत्तर उपर्युक्त उन्नीस जीवसमासों के पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा तीन-तीन भेद गिनने पर सभी सत्तावन जीवसमास होते हैं।

प्र.980 जीवसमास के अण्ठानवे भेद कौन-से हैं?

उत्तर जीवों के एकेन्द्रिय के उपर्युक्त 14 भेदों के पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा तीन-तीन भेद हैं, अत: एकेन्द्रिय सम्बन्धी 14 × 3 = 42 भेद होते हैं।

विकलत्रय के पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा तीन-तीन भेद हैं, अत: विकलत्रय के 3 × 3 = 9 भेद होते हैं। कर्मभूमिज पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के संज्ञी और असंज्ञी की अपेक्षा दो भेद हैं। इन दोनों के जलचर, थलचर और नभचर की अपेक्षा तीन-तीन भेद होने से छ: भेद होते हैं। ये ही छ: प्रकार के जीव गर्भजन्म और सम्मूर्च्छन जन्म की अपेक्षा दो प्रकार के होते हैं। गर्भ जन्म वाले छ: प्रकार के जीवों के पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त की अपेक्षा दो-दो भेद हैं अत: 6 × 2 = 12 भेद होते हैं। सम्मूर्च्छन जन्म वाले छह प्रकार के जीवों के पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा तीन-तीन भेद अत: 6 × 3 = 18 भेद होते हैं।

इस तरह कर्मभूमिज तिर्यंचों के 12 + 18 = 30 भेद होते हैं। भोगभूमिज पंचेन्द्रिय तिर्यंचों और निर्वृत्यपर्याप्त की अपेक्षा दो-दो भेद हैं अत: 2 × 2 = 4 भेद होते हैं।

आर्यखण्ड के मनुष्यों के पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा तीन भेद होते हैं।

म्लेच्छखण्ड के मनुष्य के पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त की अपेक्षा दो भेद होते हैं।

भोगभूमिज और और कुभोगभूमिज मनुष्य के पर्याप्त और निर्वृत्यपयाप्त की अपेक्षा दो-दो भेद हैं।

देव और नारकियों के पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त की अपेक्षा दो-दो भेद होते हैं।

इस प्रकार तिर्यंचों के 42 + 5 + 12 + 18 + 4 = 85 भेद, मनुष्यों के 3 + 2 + 4 = 9 भेद, देव में 2 भेद और नारकी में 2 भेद, ये सब मिलाकर जीवसमास के 85 + 9 + 4=98 भेद होते हैं। (गो.सा.जी.का. गाथा ७०-८०/क.प्र.भा.१, पृ.१२-१३)

प्र.981 योनि किसे कहते हैं?

उत्तर जीवों के उत्पत्ति स्थान को योनि कहते हैं। (आकार योनि, गुणयोनि का वर्णन देखिये गो.सा.गाथा ८१ से ८९ तक)

प्र.982 गुणयोनि के चौरासी लाख भेद कौन से हैं?

उत्तर नित्य-निगोद, इतर-निगोद एवं पृथिवी, जल, अग्नि और वायुकायिक इन छह प्रकार के जीवों में से प्रत्येक की सात-सात लाख, प्रत्येक वनस्पति की दस लाख, विकलत्रयों में प्रत्येक की दो-दो लाख, देव-नारकी और पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में प्रत्येक की चार-चार लाख और मनुष्यों की चौदह लाख- इस तरह सब मिलाकर जीवों के उत्पत्ति-स्थान रूप गुणयोनि के चौरासी लाख भेद आगम में बतलाये गये हैं।

प्र.983 कुल किसे कहते हैं?

उत्तर भिन्न-भिन्न शरीरों की उत्पत्ति में कारण भूत नोकर्म वर्गणा के भेदों को कुल कहते हैं।

प्र.984 आगम दृष्टि से किस जीव के कितने कुल होते हैं?

उत्तर विभिन्न जीवों के कुल-पृथिवीकायिक के २२ लाख कोटि, जलकायिक के ७ लाख कोटि,

अग्निकायिक के ३ लाख कोटि, वायुकायिक के ७ लाख कोटि, वनस्पतिकायिक के २८ लाख कोटि, द्वीन्द्रिय के ७ लाख, त्रीन्द्रिय के ८ लाख कोटि, चतुरिन्द्रिय के ९ लाख कोटि, पंचेन्द्रिय जलचर के १२ १/२ लाख कोटि, पंचेन्द्रिय (छाती के सहारे चलने वाले) के ९ लाख कोटि, देव के २६ लाख कोटि, नारकी के २५ लाख कोटि और मनुष्य के १४ लाख कोटि।

प्र.985 समस्त संसारी जीवों के कुलों की संख्या का जोड़ कितना है?

उत्तर समस्त कुलों अथवा कुलकोटियों की संख्या का जोड़ एक कोड़ा-कोड़ी निन्यानवे लाख पचास हजार कोटि है। कहीं-कहीं मनुष्यों के कुलों की संख्या १२ लाख कोटि बतलायी गई है, अत: उनके मत से समस्त कुलों का परिमाण एक कोड़ा-कोड़ी सत्तानवे लाख पचास हजार कोटि जानना चाहिए। (पर्याप्तियों का वर्णन देखें जैनागम संस्कार अ .१७, पृ.१७१)

प्र.986 लब्ध्यपर्याप्तक जीव एक अन्तर्मुहूर्त्त में अधिक-से-अधिक कितने भवधारण कर सकता है?

उत्तर एक लब्ध्यपर्याप्तक जीव यदि निरन्तर जन्म-मरण करे तो एक अन्तर्मुहूर्त्त में अधिक-से-अधिक ६६३३६ बार जन्म और उतने ही मरण कर सकता है। इन भवों में प्रत्येक भव का काल क्षुद्रभव प्रमाण है अर्थात् एक श्वास का अठारहवाँ भाग है।

प्र.987 एक अन्तर्मुहूर्त्त में कौन-कौन से लब्धिपर्याप्तकों के कितने-कितने भव होते हैं?

उत्तर पृथिवी, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारण वनस्पति के बादर और सूक्ष्म तथा प्रत्येक वनस्पति इन ग्यारह प्रकार के लब्ध्यपर्याप्तक जीवों में से प्रत्येक के ६०१२-६०१२ उत्कृष्ट भव की अपेक्षा एकेन्द्रियों के उत्कृष्ट भव ६०१२ × ११ = ६६१३२ होते हैं। द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के उत्कृष्ट ८० भव, त्रीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के ६० भव, चतुरिन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के उत्कृष्ट ४० भव, असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के उत्कृष्ट ८ भव, संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के उत्कृष्ट ८ भव और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तक के उत्कृष्ट ८ भव इस तरह सभी मिलाकर एक अन्तर्मुहूर्त्त काल में उत्कृष्ट भव ६६३३६ होते हैं।

प्र.988 लब्ध्यपर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और पर्याप्त अवस्था किन-किन गुणस्थानों में होती हैं।

उत्तर लब्ध्यपर्याप्त अवस्था मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में होती है। वह भी सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न होने वाले मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति के जीवों के होती है, अन्य जीवों के नहीं।

निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, अविरतसम्यक्त्व, आहारक शरीर की अपेक्षा प्रमत्तविरत और सयोगकेवली जिन के समुद्घात के काल में कपाट, प्रतर और लोकपूरण अवस्था की अपेक्षा होती है।

पर्याप्त अवस्था सभी गुणस्थानों में होती है।

प्र.989 प्राण किसे कहते हैं?

उत्तर जिससे जीव की पहचान होती है उसे प्राण कहते हैं।

प्र.990 जीव की पहचान कौन-कौन से प्राणों से होती है?

उत्तर जीव की पहचान द्रव्य और भाव प्राणों से होती है।

प्र.991 द्रव्य प्राण किन्हें कहते हैं?

उत्तर संसार में जिनके संयोग से जीव जीवित और जिनके वियोग से मृत कहलाता है उन्हें द्रव्य प्राण कहते हैं।

प्र.992 भाव प्राण किन्हें कहते हैं?

उत्तर चेतन रूप ज्ञान और दर्शन आदि गुणों को भाव प्राण कहा जाता है, ये प्राण सिद्ध अवस्था में भी मौजूद रहते हैं।

प्र.993 द्रव्य प्राण कितने होते हैं और कौन-कौन-से होते हैं?

उत्तर द्रव्य प्राण दस होते हैं- ५ इन्द्रियाँ, ३ बल, आयु और श्वासोच्छ्वास ।

प्र.994 कौन-से जीव के कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर एकेन्द्रिय जीव के स्पर्शेन्द्रिय, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास इस तरह ४ प्राण होते हैं।

द्वीन्द्रिय जीव के स्पर्शन, रसना, कायबल, वचन बल, आयु और श्वासोच्छ्वास इस तरह ६ प्राण होते हैं।

त्रीन्द्रिय जीव के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कायबल, वचन बल, आयु और श्वासोच्छ्वास इस तरह ७ प्राण होते हैं।

चतुरिन्द्रिय जीव के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कायबल, वचनबल, आयु और श्वासोच्छवास इस तरह ८ प्राण होते हैं।

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत, कायबल, वचनबल, आयु और श्वासोच्छ्वास इस तरह ९ प्राण होते हैं।

संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, कायबल, वचन बल, मन बल, आयु और श्वासोच्छ्वास इस तरह १० प्राण होते हैं।

प्र.995 अपर्याप्त अवस्था में जीवों के कितने प्राण होते हैं?

उत्तर अपर्याप्त अवस्था में वचनबल, मनबल और श्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण नहीं होते, अतः अपर्याप्तक एकेन्द्रिय आदि जीवों के क्रमशः तीन, चार, पाँच, छह, सात और सात होते हैं। (अपर्याप्त अवस्था में मिश्रकाययोग रूप बल और भाव इन्द्रिय जानना चाहिए)

प्र.996 कौन-कौन से कर्म से कौन-से प्राण उत्पन्न होते हैं?

उत्तर मनोबल-प्राण और इन्द्रिय-प्राण वीर्यान्तराय कर्म और मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम रूप अंतरंग कारण से उत्पन्न होते हैं। काय-बलप्राण शरीर नामकर्म के उदय से उत्पन्न होता है। श्वासोच्छ्वास प्राण श्वासोच्छ्वास और शरीर नामकर्म के उदय से उत्पन्न होता है। वचन बल स्वर नामकर्म के साथ शरीर नामकर्म का उदय होने पर उत्पन्न होता है।

प्र.997 संज्ञा किसे कहते हैं?

उत्तर जिन आहार, भय, मैथुन और परिग्रह रूप निमित्तों से संक्लेशित होकर जीव इस भव में जिनके विषय का सेवन करने से जीव पर-भव में भी दारुण दु:ख को प्राप्त होते हैं वे संज्ञायें कहलाती हैं।

प्र.998 कौन-कौन-सी संज्ञा कौन-कौन-से गुणस्थान तक होती है?

उत्तर आहार संज्ञा छठे गुणस्थान तक, भय संज्ञा आठवें गुणस्थान तक, मैथुन संज्ञा नवम गुणस्थान के सवेद भाग तक और परिग्रह संज्ञा दसवे गुणस्थान तक होती है।

प्र.999 अप्रमत्तादि गुणस्थानों में आहार संज्ञा क्यों नहीं होती है?

उत्तर अप्रमत्तादि गुणस्थानों में आहार संज्ञा इस कारण नहीं होती क्योंकि वहाँ आहार संज्ञा उत्पन्न होने का कारण असाता वेदनीय कर्म का तीव्र उदय या उसकी उदीरणा का नहीं पाया जाना है।

प्र.1000 सप्तम आदि गुणस्थानों में जो भय आदि तीन संज्ञायें बतलायी गई हैं उसका कारण क्या है?

उत्तर सप्तम आदि गुणस्थानों में शेष संज्ञाओं का कथन उपचार से है क्योंकि तत्तत्कर्मों का उदय वहाँ पाया जाता है, फिर भी उनका वहाँ पर कार्य नहीं हुआ करता, जिसका कारण परम वैराग्य और ध्यान है।

प्र.1001 मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर प्रत्यक्ष ज्ञान में देखे गये जीवादि पदार्थों का जिनभावों के द्वारा अथवा जिन पर्यायों में विचार-अन्वेषण किया जाय (या खोजा जाय) उनको मार्गणा कहते हैं। (मृग्यतेति मार्गणा)

प्र.1002 मार्गणा के भेद कितने होते हैं?

उत्तर मार्गणा के भेद चौदह हैं- १. गति, २.इन्द्रिय, ३. काय, ४.योग, ५.वेद, ६.कषाय, ७.ज्ञान, ८. संयम, ९. दर्शन, १०. लेश्या, ११. भव्यत्व, १२. सम्यक्त्व, १३. संज्ञी और १४. आहार।

प्र.1003 गति मार्गणा किसको कहते हैं?

उत्तर गति नामक नामकर्म के उदय से उत्पन्न हुई जीव की पर्याय विशेष को गति कहते हैं। जिसके गोचर भेद हैं- नरकगति, तिर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति।

प्र.1004 इन्द्रिय मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर संसारी आत्मा के शारीरिक चिह्न विशेष को इन्द्रिय कहते हैं। जिसके द्रव्य और भाव का भेद हैं।

प्र.1005 काय मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर त्रस स्थावर नामकर्म के उदय से उत्पन्न हुई जीव की त्रस, स्थावर पर्याय विशेष को कायमार्गणा कहते हैं। एकेन्द्रिय स्थावर और द्वीन्द्रियादि त्रस कहलाते हैं।

प्र.1006 योग मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर पुद्गल विपाकी शरीर और अंगोपांग नामकर्म के उदय से मनोवर्गणा, वचनवर्गणा और कायवर्गणा के अवलम्बन से युक्त आत्मा को जो शक्ति पुद्गल स्कन्धों को कर्म और नोकर्मरूप परिणमाने में समर्थ है, उसे भावयोग कहते हैं और उस शक्ति के धारी आत्मा के प्रदेशों में जो हलन-चलन होती है वह द्रव्ययोग है।

प्र.1007 योगों के कितने भेद हैं?

उत्तर सत्य, असत्य, उभय और अनुभय के भेद से मनोयोग और वचन योग के चार भेद तथा औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र और कार्मणकाय योग के भेद से काययोग पन्द्रह भेद हैं।

प्र.1008 वेद मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर पुरुषवेद, स्त्रीवेद और नपुंसक वेद नामक नोकषाय के उदय से जो रमण की इच्छा होती है वह भाववेद है। तथा अंगोंपांग नाकर्म के उदय से चिह्नविशेष रचना होना द्रव्य वेद कहलाता है।

प.1009 कषाय मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर जो मुख्यत: सम्यक्त्व व चारित्र गुणों का घात करती है। (रोकती है) उसे कषाय कहते हैं।

प्र.1010 कषाय के कितने भेद है?

उत्तर कषाय के मूल में चार भेद हैं क्रोध, मान, माया और लोभ। उत्तर भेद पच्चीस हैं। (विशेष देखें जै.सं. पृष्ठ १६३)

प्र.1011 ज्ञान मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर जिसके द्वारा जीव त्रिकाल विषयक द्रव्य, गुण और उसकी अनेक प्रकार की पर्यायों को जाने उसे ज्ञान कहते हैं। (पंचज्ञान देखें जैनागम सं.अ.१०, पृष्ठ ७९/ मतिज्ञान के भेद आगे कहेंगे।)

प्र.1012 ज्ञान मार्गणा के आठ भेद कौन-से हैं?

उत्तर मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय और केवलज्ञान तथा कुमति, कुश्रुत और कुअवधि ज्ञान।

प्र.1013 सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष, सकल प्रत्यक्ष और विकल प्रत्यक्ष ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर मतिज्ञान को सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष, केवलज्ञान को सकल प्रत्यक्ष तथा अवधिज्ञान और मन:पर्ययज्ञान को विकल प्रत्यक्षज्ञान कहते हैं।

प्र.1014 संयम मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर अहिंसादि व्रतों का धारण, ईर्यादि समिति पालन, क्रोधादि कषाय निग्रह, त्रि-गुप्तियों की साधना और पंच इंद्रिय विजय संयम कहलाता है।

प्र.1015 संयम मार्गणा के कितने भेद हैं?

उत्तर सामायिक, छेदोपस्थापन, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय, यथाख्यात, संयमासंयम और असंयम ऐसे सात भेद हैं। (विशेष आगे कहेंगे।)

प्र.1016 दर्शन मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर सामान्य-विशेषात्मक पदार्थ के विशेष अंश को ग्रहण न करके सामान्य अंश का जो निर्विकल्प ग्रहण होता है, उसे दर्शन कहते हैं।

प्र.1017 दर्शन मार्गणा के चार भेद कौन-से हैं?

उत्तर चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन।

प्र.1018 लेश्या मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर कषाय से अनुरंजित मन, वचन और काय की प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं।

प्र.1019 लेश्या के छह भेद कौन-से हैं?

उत्तर कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल।

प्र.1020 भव्य मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर मुक्ति (मोक्ष) प्राप्ति की योग्यता वाला भव्य और उससे विपरीत अभव्य कहलाता है।

प्र.1021 सम्यक्त्व मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर जिनवर कथित के द्रव्य, पञ्चास्तिकाय और नव पदार्थों पर श्रद्धान करना सम्यक्त्व कहलाता है।

प्र.1022 सम्यक्त्व मार्गणा के छह भेद कौन-से हैं?

उत्तर औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक सम्यक्त्व, मिश्र, सासादन और मिथ्यात्व।

प्र.1023 संज्ञी मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से जो जीव शिक्षा क्रिया, उपदेश और आलाप (भाषादि) को मन के अवलम्बन से ग्रहण करता है उसे संज्ञी कहते हैं और इससे विपरीत असंज्ञी कहलाता है। इस मार्गणा के ऐसे दो ही भेद हैं।

प्र.1024 आहार मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर औदारिकादि तीन शरीर और छह पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणा को आहार कहते हैं। उसे जो ग्रहण करता है वह आहारक है। उससे रहित अनाहारक कहलाता है। इस मार्गणा के ऐसे दो भेद हैं। (मार्गणाओं का विशेष विषय आगे कहा जावेगा।)

प्र.1025 कौन-सी मार्गणाओं में किस अपेक्षा से जीवसमास का अन्तर्भाव होता है?

उत्तर इन्द्रिय और कायमार्गणाओं में स्वरूप-स्वरूपवत् सम्बन्ध की अपेक्षा अथवा सामान्य विशेष की अपेक्षा जीवसमास का अन्तर्भाव सम्भव है। क्योंकि इन्द्रिय तथा काय जीवसमास के स्वरूप हैं और जीवसमास स्वरूपवान हैं। तथा इन्द्रिय और काय विशेष हैं और जीवसमास सामान्य हैं।

प्र.1026 इन्द्रिय मार्गणा में पर्याप्ति का अन्तर्भाव किस अपेक्षा से होता है?

उत्तर धर्म और धर्मी संबंध की अपेक्षा पर्याप्ति का इन्द्रिय में अन्तर्भाव होता है क्योंकि इन्द्रिय धर्मी है, और पर्याप्ति धर्म है।

प्र.1027 श्वासोच्छ्वास प्राण, वचनबल, प्राण तथा मनोबल प्राण का पर्याप्ति में अन्तर्भाव किस अपेक्षा संभव है?

उत्तर कार्यकारण संबंध की अपेक्षा श्वासोच्छ्वास प्राण, वचनबल प्राण तथा मनोबल प्राण का पर्याप्ति में अन्तर्भाव हो सकता है क्योंकि तथा प्राण कार्य है और पर्याप्ति कारण है। पर्याप्तियाँ; इन्द्रिय और काय में अन्तर्भूत हैं, अतएव श्वासोच्छ्वास, वचनबल और मनोबल प्राण भी उन्हीं में अंतर्भूत हो जाते हैं।

प्र.1028 कायबल प्राण योग में किस अपेक्षा अन्तर्भूत हो जाता है?

उत्तर कायबल प्राण विशेष है और योग सामान्य है इसलिए सामान्य-विशेष की अपेक्षा योग मार्गणा में कायबल प्राण अंतर्भूत हो जाता है।

प्र.1029 ज्ञानमार्गणा में इन्द्रियों का अन्तर्भाव किस अपेक्षा से सम्भव होता है?

उत्तर कार्यकारण सम्बंध की अपेक्षा ज्ञानमार्गणा में इन्द्रियों का अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि ज्ञान कार्य के प्रति लब्धीन्द्रिय कारण है।

प्र.1030 गति मार्गणा में आयु प्राण का अन्तर्भाव किस अपेक्षा से सम्भव है?

उत्तर गति मार्गणा में आयु प्राण का अन्तर्भाव साहचर्य संबन्ध की अपेक्षा हो सकता है क्योंकि इन दोनों ही कर्मों का उदय सहचर है साथ-साथ ही हुआ करता है।

प्र.1031 संज्ञाओं का अन्तर्भाव किस अपेक्षा से किस मार्गणा में होता है?

उत्तर आहार रतिपूर्वक होता अर्थात् आहार संज्ञा राग विशेष होने से राग का ही स्वरूप है और माया तथा लोभ कषाय ये दोनों ही राग विशेष होने से स्वरूपवान हैं। इसलिए स्वरूपवत् सम्बंध की अपेक्षा माया और लोभ कषाय में आहार संज्ञा का अन्तर्भाव होता है। इसी अपेक्षा से क्रोध तथा मान कषाय में भय संज्ञा का अन्तर्भाव होता है। कार्यकारण संबंध की अपेक्षा वेद कषाय में मैथुन संज्ञा का और लोभ कषाय में परिग्रह संज्ञा का अन्तर्भाव होता है। क्योंकि वेदकषाय तथा लोभकषाय कारण है और मैथुन संज्ञा तथा परिग्रह संज्ञा उनके क्रम से कार्य हैं।

प्र.1032 उपयोग का दर्शन मार्गणा में अन्तर्भाव किस अपेक्षा से होता है?

उत्तर आगम उपयोग साकार और अनाकार रूप से दो भेद रूप है। यह घट है, यह पट है ऐसा विशेष रूप प्रतिभासित होना साकार उपयोग है जो कि ज्ञान रूप है, अत: इसका अन्तर्भावज्ञान मार्गणा में होता है। जिसमें कोई भी विशेष पदार्थ प्रतिभासित न होकर केवल महा सामान्य रूप ही विषय प्रतिभासित हो उसको अनाकार उपयोग कहते हैं जो दर्शन रूप है, अत: इसका अन्तर्भाव दर्शन मार्गणा में हो जाता है। (अन्तर्भाव प्रकरण गो.जी.गा.५,६,७)

प्र.1033 साकार उपयोग रूप ज्ञानोपयोग के कितने भेद हैं?

उत्तर साकार उपयोग रूप ज्ञानोपयोग के मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान, कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान और कुअवधिज्ञान अथवा विभंगज्ञान, इस तरह आठ भेद हैं। (ज्ञान के लक्षण-जै.सं. पृ.७९)

प्र.1034 अनाकार उपयोग रूप दर्शनोपयोग के कितने भेद हैं?

उत्तर अनाकार उपयोग रूप दर्शनोपयोग के चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन, इस प्रकार चार भेद होते हैं।

प्र.1035 सान्तर और निरन्तर मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर जिन मार्गणाओं में अन्तर-विरह या विच्छेद पड़ता है, उन्हें सान्तर मार्गणा कहते हैं और इससे

विपरीत मार्गणाओं को निरन्तर मार्गणा कहते हैं।

प्र.1036 यहाँ अन्तर से क्या तात्पर्य है?

उत्तर किसी भी विवक्षित गुणस्थान या मार्गणास्थान को छोड़कर पुनः उसी स्थान को प्राप्त करने में जीव को बीच में जो समय लगता है उसको अन्तर-विरह या विच्छेद कहते हैं।

प्र.1037 सान्तर मार्गणाएँ कौन-सी हैं?

उत्तर सान्तर मार्गणाएँ आठ हैं- १. उपशम सम्यक्त्व, २. सूक्ष्मसाम्पराय संयम, ३. आहारक काययोग, ४.आहारक मिश्रकाययोग, ५. वैक्रियिक मिश्रकाययोग, ६.लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य, ७. सासादन सम्यक्त्व और ८.मिश्र।

प्र.1038 आठ अन्तर मार्गणाओं का उत्कृष्ट और जघन्य अन्तर काल कितना होता है?

उत्तर नाना जीवों की अपेक्षा आठ अन्तर मार्गणाओं के उत्कृष्ट अन्तर काल क्रमशः १. सात दिन, २. छह महीना, ३. पृथक्त्व वर्ष, ४. पृथक्त्ववर्ष, ५.बारह मुहूर्त्त, ६. पल्य का असंख्यातवाँ भाग, ७. पल्य का असंख्यातवाँ भाग और ८. पल्य का असंख्यातवाँ भाग है। तथा सर्व आठों का जघन्य अन्तर काल एक समय है।

प्र.1039 प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित पंचम, छट्ठे और सातवें गुणस्थान का उत्कृष्ट विरह-अन्तर काल कितना होता है?

उत्तर प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित पंचम गुणस्थान का उत्कृष्ट अन्तर काल चौदह दिन है, और छट्ठे, सातवे गुणस्थान का उत्कृष्ट अन्तर काल पन्द्रह दिन जानना चाहिए।

प्र.1040 वनस्पति काय में साधारण वनस्पति कायिक का लक्षण क्या है?

उत्तर जिन जीवों का शरीर साधारण नामकर्म के उदय के कारण निगोद रूप होता है, जहाँ एक शरीर में अनन्तानन्त जीव रहते हैं और जिनका आहार, श्वासोच्छ्वास, जीवन तथा मरण समान (एक साथ) होता है उन्हें साधारण वनस्पति कहते हैं।

प्र.1041 साधारण वनस्पति के भेद उनमें विशेषता क्या है?

उत्तर साधारण वनस्पति के बादर और सूक्ष्म की अपेक्षा दो भेद होते हैं। एक बादर निगोद शरीर में या एक सूक्ष्म निगोद शरीर में साथ ही उत्पन्न होने वाले अनन्तानन्त साधारण जीव या तो पर्याप्तक ही होते हैं या अपर्याप्तक ही होते हैं, किन्तु मिश्र रूप नहीं होते, क्योंकि उनके एक समान कर्मोदय का नियम है। (क.दी.पृ.२८)

प्र.1042 प्रत्येक वनस्पति के भेद कौन-से हैं?

उत्तर प्रत्येक वनस्पति के १.सप्रतिष्ठित प्रत्येक और २. अप्रतिष्ठित प्रत्येक रूप दो भेद होते हैं।

प्र.1043 सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिकायिक का लक्षण क्या है?

उत्तर जिनके आश्रय से बादर निगोदिया जीव रहते हैं तथा जिनकी शिरा, सन्धि तथा पर्व आदि प्रकट न हुए हों, जिनका भंग करने पर समान भंग होता हो, तोड़ने पर जिनमें परस्पर तन्तु न लगे रहें एवं छेद

(काटने) करने पर भी जिनकी पुनः वृद्धि हो जावे और जिसके स्कन्ध की छाल मोटी हो उनको सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक कहते हैं। (इन्हें उपचार से साधारण वनस्पति भी कहते हैं।)

प्र.1044 सप्रतिष्ठित प्रत्येक और साधारण वनस्पति में क्या अन्तर है?

उत्तर सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति के आश्रित रहने वाले बादर निगोदिया जीव अपने शरीर का स्वतन्त्र अस्तित्व रखते हैं। साधारण वनस्पति में रहने वाले अनंतानंत जीव अपने शरीर का स्वतन्त्र अस्तित्व न रखकर एक शरीर के ही स्वामी होते हैं।

प्र.1045 अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिकायिक का लक्षण क्या है?

उत्तर जिनके आश्रय से बादर निगोदिया जीव नहीं रहते हैं तथा जिनकी शिरा, सन्धि और पर्व आदि की रेखाएँ प्रकट हो चुकी हैं, तोड़ने पर जिनका समान भंग नहीं होता है एवं छिन्न हो जाने पर जो पुनः उत्पन्न नहीं होती हैं और जिनके स्कन्ध की छाल पतली होती है, उनको अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक कहते हैं।

प्र.1046 अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति की विशेषता क्या है?

उत्तर अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक अपनी उत्पत्ति के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त्त पर्यन्त सप्रतिष्ठित प्रत्येक ही रहती है।

प्र.1047 काय, कायिक आदि से क्या तात्पर्य है?

उत्तर वनस्पति सामान्य (सर्व जगह प्रयुक्त शब्द) है, जैसे वनस्पति।

काय- अर्थात् जिससे जीव निकल चुका है, जैसे-वनस्पतिकाय।

कायिक- अर्थात् जिसमें जीव रह रहा है जैसे-वनस्पतिकायिक।

वनस्पति जीव- अर्थात् जो वनस्पति नामकर्म के साथ अन्य गति से मरण कर वनस्पति में जन्म लेने आ रहा है, अभी विग्रह गति में है। इस तरह पाँचों ही स्थावरों में चार-चार प्रकार पाये जाते हैं।

प्र.1048 एक निगोद शरीर में द्रव्य की अपेक्षा जीवों का प्रमाण कितना है?

उत्तर एक निगोद-शरीर में समस्त सिद्ध राशि का और सम्पूर्ण अतीत काल के समयों का जितना प्रमाण है, द्रव्य की अपेक्षा उनसे अनन्तगुणे जीव एक निगोद शरीर में पाय जाते हैं।

प्र.1049 नित्य निगोद और इतर निगोद का लक्षण क्या है?

उत्तर जो कभी भी या आज तक निगोद अवस्था से नहीं निकले हैं, उन्हें नित्य निगोद कहते हैं। जो निगोद से निकलकर तथा अन्य पर्यायों में जन्म लेकर पुनः निगोद में ही जन्म लेते हैं, उन्हें इतर निगोद कहते हैं।

प्र.1050 नित्य निगोदिया और इतरनिगोदिया जीवों के संसार भ्रमण काल कितना होता है।

उत्तर नित्य निगोदिया जीवों के संसार भ्रमण काल अनादि अनन्त और अनादि सान्त होता है। तथा इतर निगोदिया जीवों के संसार भ्रमण का काल सादिसान्त और सादि अनन्त होता है।

प्र.1051 सादि, अनादि सान्त और अनन्त से क्या तात्पर्य है?

उत्तर 1. सादि अर्थात् किसी विवक्षित अवस्था का प्रारम्भ होता है।
2. अनादि अर्थात् किसी विवक्षित अवस्था का प्रारम्भ नहीं हुआ वह अवस्था अनादि (हमेशा) काल से है।
3. सान्त अर्थात् कोई विवक्षित अवस्था जो अन्त (समापन) सहित होती है।
4. अनन्त अर्थात् कोई विवक्षित अवस्था जो कदापि अन्त-समापन को प्राप्त नहीं होती है।

प्र.1052 सिद्धान्तानुसार निगोदिया जीव किस कायिक में गर्भित किये जाते हैं?

उत्तर सिद्धान्तानुसार निगोदिया जीव वनस्पति कायिक में गर्भित किये जाते हैं।

प्र.1053 बादर निगोदिया जीव कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं?

उत्तर पृथिवी, जल, अग्नि और वायु इन चार स्थावरों में, आहारक शरीर, देव, नारकियों का शरीर और केवली भगवान का शरीर इन आठ स्थानों में बादर निगोदिया जीव नहीं रहते हैं।

प्र.1054 कौन-से जीवों का शरीर निगोदिया जीवों से प्रतिष्ठित होता है?

उत्तर वनस्पतिकायिक जीवों का शरीर तथा द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्यों का शरीर निगोदिया जीवों से प्रतिष्ठित (युक्त) होता है।

प्र.1055 स्थावर और त्रस काय वाले जीवों के कौन-से गुणस्थान होते हैं?

उत्तर स्थावरकायिक जीवों के एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान होता है और त्रस कायिक जीवों के चौदह गुणस्थान होते हैं।

प्र.1056 सत्य मनोयोग आदिक का क्या स्वरूप है?

उत्तर उदाहरणार्थ- घट को घट जानना या कहना सत्य है। घट को पट (चित्र) जानना या कहना असत्य है। कमण्डलु को घट कहना या जानना उभय है क्योंकि कमण्डलु भी घट के समान जल भरने के काम आता है अत: सत्य है और कमण्डलु का आकार घट जैसा नहीं है अत: असत्य है। तथा सत्य और असत्य के निर्णय से रहित पदार्थ अनुभय है। सत्य, असत्य, उभय और अनुभय रूप पदार्थों में जो मन और वचन की प्रवृत्ति होती है अर्थात् चार प्रकार के पदार्थों को जानने या कहने के लिए जीव जो प्रयत्न करता है, वह सत्य आदि पदार्थों के सम्बन्ध से चार प्रकार का मनोयोग और चार का प्रकार का वचन योग कहलाता है। (क.प्र.)

प्र.1057 मनोयोग किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर असत्य मनोयोग और उभय मनोयोग बारहवें गुणस्थान तक होते हैं और सत्य मनोयोग तथा अनुभय मनोयोग सयोग केवली नामक तेरहवें गुणस्थान तक होते हैं।

प्र.1058 केवली भगवान के मनोयोग कैसे सम्भव है?

उत्तर इन्द्रियज्ञान से रहित होने के कारण अतीन्द्रिय सयोग केवली भगवान के मुख्य (भाव) रूप से तो मनोयाग नहीं है किन्तु अंगोपांग नामकर्म का उदय होने से हृदय में स्थित द्रव्यमन के लिए मनोवर्गणा के स्कन्ध निरन्तर आते रहते हैं, अत: मनोयोग को उपचार से माना गया है।

प्र.1059 वचनयोग किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर असत्य वचनयोग और उभय वचनयोग बारहवें गुणस्थान तक होते हैं और सत्य वचनयोग तथा अनुभय वचनयोग तेरहवें गुणस्थान तक होते हैं।

प्र.1060 औदारिक मिश्र काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर विग्रहगति के बाद मनुष्य अथवा तिर्यञ्च गति में जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नहीं हो जाती तब तक अर्थात् अपर्याप्त अवस्था में उस जीव के कार्मण शरीर और औदारिक शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों का जो परिस्पन्दन होता है, उसे औदारिक मिश्र काययोग कहते हैं।

प्र.1061 औदारिक-मिश्रकाययोग किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर औदारिक मिश्र काययोग प्रथम मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, दूसरे सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, चौथे असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान और तेरहवें सयोग केवली गुणस्थान में होता है।

प्र.1062 औदारिक काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था के अन्तर्मुहूर्त्त बाद पर्याप्त हो जाने पर औदारिक शरीर के निमित्त से जो आत्मप्रदेशों का परिस्पन्दन होता है उसे औदारिक काययोग कहते हैं। (साथ ही यथावसर मनोयोग और वचन भी होता है।)

प्र.1063 औदारिक काययोग के कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर औदारिक काययोग के प्रथम से लेकर तेरह गुणस्थान होते हैं। (गो.सा.कर्म का.(आ.म.)पृ.२६६)

प्र.1064 वैक्रियिक मिश्र काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर विग्रहगति के बाद देवगति और नरकगति में अपर्याप्त अवस्था के अन्तर्मुहूर्त्त पर्यन्त कार्मण शरीर और वैक्रियिक शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों का जो परिस्पन्दन होता है उसे वैक्रियिक मिश्र काययोग कहते हैं।

प्र.1065 वैक्रियिक-मिश्र काययोग में कौन-से गुणस्थान होते हैं?

उत्तर वैक्रियिक मिश्र काययोग में मिथ्यात्व, सासादन और असंयत सम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान होते हैं।

प्र.1066 वैक्रियिक काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर पर्याप्त अवस्था में वैक्रियिक शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है उसे वैक्रियिक काययोग कहते हैं। (साथ ही यथावसर वचनयोग और मनोयोग भी होता है।)

प्र.1067 वैक्रियिक काययोग में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर वैक्रियिक काययोग में मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र और असंयत सम्यग्दृष्टि ये चार गुणस्थान होते हैं।

प्र.1068 कोई-कोई औदारिक कायवाले भी विक्रिया करते देखे जाते हैं, उनका यहाँ से क्या सम्बन्ध है?

उत्तर बादर तेज कायिक और वायुकायिक तथा संज्ञी पर्याप्तक पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च एवं मनुष्य तथा भोगभूमिज तिर्यञ्च-मनुष्य भी अपने औदारिक शरीर के द्वारा जिनके कि शरीर में यह योग्यता पायी

जाती है विक्रिया किया करते हैं, परन्तु उनका वैक्रियिक शरीर से सम्बन्ध नहीं है। अत: उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया गया है।

प्र.1069 आहारक मिश्र काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर छठे गुणस्थानवर्ती जिन मुनियों के मस्तक से जो श्वेतरंग का पुतला निकलने वाला है, उनके प्रथम अन्तर्मुहूर्त्त में जब तक आहारक शरीर पर्याप्त नहीं हो जाता तब तक औदारिक शरीर और आहारक शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है, उसे आहारक मिश्र काययोग कहते हैं।

प्र.1070 आहारक मिश्र और आहारक काययोग में कौन-सा गुणस्थान होता है?

उत्तर उपर्युक्त दोनों योगों में एक मात्र प्रमत्त संयत नामक छठा गुणस्थान होता है।

प्र.1071 आहारक काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर छठे गुणस्थानवर्ती मुनि के मस्तक से जो श्वेत रंग का पुतला निकलता है वह केवली के पास जाकर सूक्ष्म-पदार्थो का आहरण-ग्रहण करता है, अत: इस आहारक शरीर के द्वारा आत्मप्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है, उसे आहारक काययोग कहते हैं।

प्र.1072 कार्मण काययोग किसे कहते हैं?

उत्तर यह जीव जब मरणोपरान्त नवीन शरीर की प्राप्ति हेतु विग्रह गति में जाता है तब कार्मण शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों का जो परिस्पन्दन होता है, उसे कार्मण काययोग कहते हैं।

प्र.1073 कार्मण कायेयोग में कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं?

उत्तर कार्मण काययोग में प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ गुणस्थानों की विग्रह गति की अवस्था तथा तेरहवें गुणस्थानवर्ती की समुद्घात के समय प्रतर और लोकपूरण अवस्था होती है।

प्र.1074 शरीरों के पाँच भेद कौन-से हैं?

उत्तर १. औदारिक, २.वैक्रियिक, ३.आहारक, ४.तैजस और ५.कार्मण।

प्र.1075 औदारिक शरीर का लक्षण क्या है?

उत्तर जिस शरीर की उत्पत्ति गर्भ और सम्मूर्च्छन जन्म से होती है, ऐसे मनुष्य और तिर्यञ्चों के शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र.1076 वैक्रियिक शरीर का लक्षण क्या है?

उत्तर जिस शरीर की उत्पत्ति उपपाद जन्म से होती है, ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिक शरीर कहते हैं।

प्र.1077 आहारक शरीर का लक्षण क्या है?

उत्तर प्रमत्त संयत (मुनि) के संदेह निवारणार्थ एवं असंयम का परिहार करने हेतु निकलने वाला एक हस्त प्रमाण, शुभ्र, विशुद्ध जो पुतला होता है उसे आहारक शरीर कहते हैं।

प्र.1078 आहारक शरीर किस तरह की अधिक विशेषता वाला होता है?

उत्तर आहारक शरीर रसादि धातु रहित, संहननों से रहित होता हुआ समचतुरस्रसंस्थान से युक्त एवं

चन्द्रकांत मणि के समान श्वेत तथा शुभ नामकर्म के उदय से शुभ अवयवों से युक्त हुआ करता है।

प्र.1079 आहारक शरीर के सम्बन्ध में संदेह निवारण से क्या तात्पर्य है?

उत्तर प्रमत्त-विरत किसी मुनिराज के लिए किसी सूक्ष्म पदार्थ के विषय में संदेह हो जाने पर आहारक शरीर उत्पन्न होता है और वह शरीर अन्तर्मुहूर्त्त मात्र में ढाई द्वीप स्थित किन्हीं केवली के दर्शन मात्र से या किन्हीं श्रुतकेवली के स्पर्श मात्र से संदेह (शंका) का समाधान पाकर लौट आता है और मुनिराज संतृप्त हो जाते हैं।

प्र.1080 आहारक शरीर के साथ तीर्थवंदना या वंदन से क्या प्रयोजन है?

उत्तर किसी छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज का जब किसी तीर्थंकर के तप, ज्ञान और मोक्ष कल्याणक देखने का मन करता है या किसी केवली अथवा श्रुतकेवली की वंदना अथवा ढाई द्वीपस्थ अकृत्रिमादि जिनालयों, सिद्धादि क्षेत्रों की वंदना (दर्शन) करने का तीव्र भाव उत्पन्न होता है तब ऋद्धि सदृश आहारक पुतला निकलता है और उनके अभिप्रायनुसार अन्तर्मुहूर्त्त में दर्शन, वंदनादि कर उनके शरीर में प्रवेश कर जाता है और वे मुनिराज अतिसंतुष्टि का अनुभव करते हैं।

प्र.1081 आहारक शरीर के साथ असंयम के परिहार इस हेतु से क्या तात्पर्य है?

उत्तर आहारक शरीर से असंयम के परिहार के निम्न कारण हो सकते हैं-

(१) प्रासुक-अप्रासुक मार्ग का ज्ञान करना।

(२) मिथ्यादृष्टियों या असंयमीजनों का परीक्षण करना।

(३) चर्या के योग्य स्थल का या मार्ग का अवलोकन करना।

(४) निर्विकल्प समाधि (ध्यान) के या सल्लेखना के योग्य वातावरण का ज्ञान करना।

(५) तीर्थ या पूज्य आयतनों की जानकारी लेना इत्यादि।

उपर्युक्त बातें अनुकूल होगी तो असंयम का परिहार होगा और संयम की सुरक्षा हो सकेगी।

प्र.1082 आहारक शरीर क्या वाधित या व्याघात को प्राप्त नहीं होता?

उत्तर नहीं! यह आहारक शरीर दोनों ओर से व्याघात रहित है। न तो इस शरीर के द्वारा किसी अन्य पदार्थ का व्याघात होता है। और न ही किसी दूसरे पदार्थ के द्वारा इस शरीर का व्याघात होता है। क्योंकि यह इतना सूक्ष्म हुआ करता है कि वज्रपटल को भी भेदकर यह शरीर चला जाये इसमें संदेह नहीं, यह इसकी सामर्थ्य है।

प्र.1083 आहारक शरीर की स्थिति कितने काल की होती है और क्या आहारक शरीर के काल में मरण भी सम्भव है?

उत्तर आहारक शरीर की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण ही है। आहारक शरीर पर्याप्ति के पूर्ण होने पर अर्थात् पूर्ण निर्मित होने पर कदाचिद् आहारक ऋद्धि वाले मुनि का मरण भी हो सकता है। अर्थात् आहारक शरीर के काल में आयु का क्षय- या उसकी पूर्णता सम्भव है।

प्र.1084 तैजस शरीर का लक्षण क्या है?

उत्तर जिस शरीर के निमित्त से औदारिक आदि शरीरों में एक विशिष्ट प्रकार का तेज(दीप्ति) होता है, उसे तैजस शरीर कहा जाता हैं।

प्र.1085 कार्मण शरीर का लक्षण क्या है?

उत्तर अष्ट कर्मों के समूह को कार्मण शरीर कहते हैं।

प्र.1086 कार्मण शरीर और कार्मण काय में क्या अन्तर है?

उत्तर कार्मण शरीर कर्म क्षय के पूर्व सर्व संसारी जीवों के पाया जाता है, जबकि कार्मण काययोग विग्रह गति में या केवली समुद्घात में जब आत्मा के प्रदेशों का लोक में अधिक फैलाव होता है ऐसी प्रतर व लोकपूरण अवस्था उपलब्ध होता है।

प्र.1087 विग्रह गति किसे कहते हैं?

उत्तर विग्रह अर्थात् शरीर, ऐसे नवीन शरीर-धारण हेतु जो गति होती है उसे विग्रह गति कहते हैं। अथवा विग्रह अर्थात् नोकर्म पुद्गलों के ग्रहण करने के निरोध के साथ जो गति होती है उसे विग्रह गति कहते हैं। अथवा विग्रह अर्थात् मोड़ा और ऐसे मोड़े के साथ जो गति होती है उसे विग्रह गति कहते हैं।

प्र.1088 विग्रहगति कितने प्रकार की होती है?

उत्तर विग्रहगति चार प्रकार की होती है, इषुगति या ऋजुगति, पाणिमुक्तागति, लांगलिकागति और गोमूत्रिका गति।

प्र.1089 इषुगति किसे कहते हैं?

उत्तर इषु अर्थात् बाण, धनुष से छूटे हुए बाण के सदृश मोड़ा रहित गति को इषुगति कहते हैं।

प्र.1090 ऋजुगति का अर्थ क्या है?

उत्तर ऋजु अर्थात् सरल सीधा और जिसकी बिना मोड़ा लिए सीधी गति होती है वह इषुगति के समान ऋजुगति है। इषु या ऋजुगति मात्र एक समय वाली होती है।

प्र.1091 पाणिमुक्ता गति किसको कहते हैं?

उत्तर जैसे अञ्जुली के आगे-किनारे से नीचे गिरती हुई चीज की गति होती है वैसे ही संसारी जीवों की एक मोड़े वाली गति को पाणिमुक्ता गति कहते हैं। यह गति दो समय वाली होती है।

प्र.1092 लांगलिका गति किसे कहते हैं?

उत्तर जैसे हल दो मोड़े वाला होता है वैसे ही दो मोड़े वाली गति को लांगलिका गति कहते हैं। यह गति तीन समय वाली होती है।

प्र.1093 गोमूत्रिका गति किसे कहते हैं?

उत्तर जैसे चलती हुई गाय का मूत्र अनेक मोड़े बना देता है वैसे ही तीन मोड़े वाली गति को गोमूत्रिका गति कहा जाता है। यह गति चार समय वाली होती है।

प्र.1094 कौन-से क्षेत्र में पहुँचने या उत्पन्न होने वाले जीव के लिए तीन मोड़े लेना आवश्यक होता है?

उत्तर निष्कुट (कोणा) क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले जीव के लिए तीन मोड़े लेना आवश्यक होता है। लोक शिखर का कोण भाग निष्कुट क्षेत्र कहलाता है।

प्र.1095 विग्रह गति वाला जीव अधिक से अधिक कितने समय में आहारक (आहार पर्याप्ति योग्य) हो जाता है?

उत्तर विग्रह गतिवाला जीव एक अथवा दो अथवा तीन समय तक अनाहारक रहता हुआ चौथे समय में नियम से आहारक हो जाता है। अर्थात् आहार ग्रहण करते लगता है।

प्र.1096 विग्रह गति वाले आहार का क्या लक्षण है?

उत्तर तीन शरीर और षट् पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं का ग्रहण आहार कहा जाता है।

प्र.1097 तीन शरीर और षट् पर्याप्तियों के नाम कौन-से हैं?

उत्तर औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीन शरीर तथा आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन ये षट् पर्याप्तियाँ होती हैं।

प्र.1098 विग्रहगति चार मोड़े वाली क्यों नहीं होती है?

उत्तर लोक मध्य से लेकर ऊपर, नीचे और तिरछे क्रम से विद्यमान आकाश के प्रदेशों की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं। इस श्रेणी के अनुसार ही जीवों का गमन होता है। श्रेणी का उल्लंघन करके गमन नहीं होता। अत: ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ पर पहुँचने के लिए चार मोड़े लेने पड़े। (क.प्र.)

प्र.1099 देव और नारकियों के अतिरिक्त और कौन-से जीव पृथक् विक्रिया भी कर सकते हैं?

उत्तर देव और नारकियों के अतिरिक्त भोगभूमिज तिर्यंच और मनुष्य तथा चक्रवर्ती पृथक् विक्रिया भी कर सकते हैं।(क.दी.भा.१,पृ.३३)

प्र.1100 तैजस शरीर कितने प्रकार का होता है?

उत्तर तैजस शरीर दो प्रकार का होता है, निस्सारणात्मक और अनिस्सरणात्मक।

प्र.1101 निस्सरणात्मक तैजस शरीर किसे कहते हैं?

उत्तर जो छठे गुणस्थानवर्ती ऋद्धिधारी मुनि से उत्पन्न होता है उसे निस्सरणात्मक तैजस शरीर कहते हैं। (विशेष-समुद्घात के वर्णन में कहेंगे।)

प्र.1102 अनिस्सरणाात्मक तैजस शरीर किसे कहते हैं?

उत्तर जो सर्व संसारी जीवों के तेज या दीप्ति रूप में पाया जाता है उसे अनिस्सरणात्मक तैजस शरीर कहते हैं। अथवा जो खाए गए अन्न-पान का पाचक होकर शरीर में भीतर स्थित रहता है वह अनिस्सरणात्मक तैजस कहलाता है।

प्र.1103 समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर मूल शरीर को बिना छोड़े जीव के प्रदेशों का बाहर निकलना समुद्घात कहलाता है।

प्र.1104 समुद्घात के कितने भेद हैं?

उत्तर समुद्घात के सात भेद हैं- १.वेदनासमुद्घात, २.कषाय समुद्घात, ३.विक्रिया समुद्घात,

४.मारणान्तिक समुद्घात, ५.तैजस समुद्घात, ६. आहारक समुद्घात, और ७. केवली समुद्घात।

प्र.1105 वेदना समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर बहुत पीड़ा के कारण आत्म-प्रदेशों के बाहर निकलने को वेदना समुद्घात कहते हैं।

प्र.1106 कषाय समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर क्रोध, मानादि कषायों के निमित्त से आत्मप्रदेशों के बाहर निकलने को कषाय समुद्घात कहते हैं।

प्र.1107 विक्रिया समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर विक्रिया के हेतु आत्मप्रदेशों के बाहर निकलने को विक्रिया समुद्घात कहते हैं।

प्र.1108 मारणान्तिक समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर मरण होने से पूर्व (अन्तर्मुहूर्त पहले) नवीन पर्यायधारण करने के क्षेत्र पर्यन्त आत्मप्रदेशों के बाहर निकलने को मारणान्तिक समद्घात कहते हैं।

प्र.1109 तैजस समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर शुभ या अशुभ तैजसऋद्धि के द्वारा तैजस शरीर के साथ आत्म प्रदेशों का बाहर निकलना तैजस समुद्घात कहलाता है। अथवा जीवों के अनुग्रह और विनाश में समर्थ तैजस शरीर की रचना के लिए तैजस समुद्घात होता है।

प्र.1110 अशुभ तैजस समुद्घात का स्वरूप कैसा है?

उत्तर उग्रचारित्र वाले मुनि के अति-क्रोध को प्राप्त होने पर बाएँ कंधे से बारह योजन लम्बा, नौ योजन चौड़ा और सूच्यांगुल के संख्यातवें भाग प्रमाण मोटा, जपा-पुष्प या सिंदूर के ढेर जैसे रंग वाला शरीर निकलकर और बायीं प्रदक्षिणा कर अपने क्षेत्र में स्थित हुए जीवों का विनाश करके (भस्म करके) पुनः प्रवेश करते हुए उसी मुनि को (अशुभ तैजस के स्वामी को) जो व्याप्त करता है (घेरे में लेता है) वह अशुभ तैजस समुद्घात कहलाता है। (कहते हैं ऐसे मुनि मिथ्यात्व में जाकर मरण को प्राप्त हो जाते हैं।)

प्र.1111 शुभ तैजस समुद्घात का स्वरूप कैसा है?

उत्तर रोग, दुर्भिक्ष आदि से पीड़ित जगत् के प्राणियों को देखकर जिनको दयापूर्वक अनुकम्पा प्रकट हुई है ऐसे उग्रतपस्वी सकल संयमधारी महाऋषि मुनिवर के मूल शरीर न त्यागकर पूर्वोक्त देह के प्रमाण सौम्य आकृति वाला हंस व शंख के रंग वाला शरीर दायें कंधे से निकलकर दक्षिण प्रदक्षिणा देकर रोग, दुर्भिक्ष आदि को दूर कर (जलादि वर्षाकर) पुनः अपने स्थान में आकर मुनि शरीर में प्रवेश करे और इस ऋद्धिधारी मुनि को परम शांति व तृप्ति का कारण बने वह शुभ तैजस समुद्घात कहलाता है। (ऐसे मुनिराज स्वपर रक्षक होते हैं।)

प्र.1112 अशुभ तैजस के कारण स्वरूप द्वैपायन मुनि को क्या फल मिला था?

उत्तर क्रोध-रूपी अग्नि के द्वारा जिनका तप-रूप धन भस्म हो चुका था ऐसे द्वैपायन मुनि मरण कर अग्निकुमार नामक मिथ्यादृष्टि भवन-वासी देव हुए। (ह.पु./६१/६९, ध.पु.१२/४,२,७,

१९/२१/४)

प्र.1113 आहारक समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर आहारक ऋद्धिधारक प्रमत्त संयत गुणस्थानवर्ती मुनिराज के मस्तक से निकलने वाले आहारक शरीर के द्वारा आत्मप्रदेशों का बाहर निकलना आहारक समुद्घात कहलाता है।

प्र.1114 केवली समुद्घात किसे कहते हैं?

उत्तर केवली भगवान के आयु स्थिति के समान शेष तीन अघाती कर्मों की स्थिति करने के लिए दण्ड, कपाट, प्रतर एवं लोकपूरण क्रिया में आत्मप्रदेशों का बाहर निकलना केवली समुद्घात कहलाता है।

प्र.1115 केवली समुद्घात में कितना समय व्यतीत होता है?

उत्तर केवली समुद्घात में आठ समय सम्पूर्ण होते हैं- प्रथम समय में आत्मप्रदेशों को फैलाकर दण्डाकार लम्बे करते हैं। दूसरे समय में कपाटाकार चौड़े करते हैं, तीसरे समय में प्रतर रूप तिकोने करते हैं और चौथे समय में आत्मप्रदेशों से लोक को पूर देते हैं। पाँचवे समय से लोकपूरण से प्रतर रूप, छठे समय में प्रतर से कपाट रूप, सातवें समय में कपाट से दण्ड रूप और आठवें समय में पुनः शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं।

प्र.1116 केवली समुद्घात के द्वारा आत्म-प्रदेशों के बाहरी गमन से किस तरह चारों कर्मों में समानता प्राप्त हो जाती है?

उत्तर जिस तरह कपड़े को धोकर मात्र निचोड़ कर रख देने से कपड़ा देर से सूख पाता है, परन्तु कपड़े को धोकर, निचोड़ कर झटकार देने (झटके से फैला देने) से वह शीघ्र ही सूख जाता है, उसी तरह केवली समुद्घात के द्वारा आयुकर्म के अलावा नाम, गोत्र और वेदनीय कर्म की शीघ्र ही विशिष्ट निर्जरा होकर आयुकर्म से समानता प्राप्त हो जाती है।

प्र.1117 सर्व ही केवली समुद्घात करते हैं क्या?

उत्तर यतिवृषभ आचार्य के मत से सर्व ही केवली समुद्घात करके ही मुक्त होते हैं। परन्तु अन्य आचार्य के मत् से कुछ केवली जिनके आयु कर्म से अन्य कर्मों की स्थिति अधिक है वे समुद्घात करते हैं, अन्यथा नहीं करते हैं।

प्र.1118 कौन-से केवली समुद्घात करते हैं कौन-से नहीं करते हैं?

उत्तर जो अधिक-से-अधिक छह महीने की आयु शेष रहने पर केवली होते हैं वे अवश्य ही समुद्घात करते हैं और जो छह महीने से अधिक आयु रहते हुए केवली होते हैं उनका कोई नियम नहीं है वे समुद्घात करें और न भी करें। (स्वा.का., गा.४८६, टीका)

प्र.1119 समुद्घात के काल में आत्मप्रदेशों का गमन एक ही दिशा में होता है या सर्व दिशाओं में होता है?

उत्तर आहारक और मारणान्तिक समुद्घात-अवस्था में आत्म-प्रदेशों का गमन एक ही दिशा में होता है। बाकी पाँच समुद्घातों में आत्म-प्रदेशों का गमन दसों दिशाओं में हुआ करता है।

प्र.1120 कर्म और नोकर्म किसे कहते हैं?

उत्तर कार्मण शरीर नामकर्म के उदय से होने वाले ज्ञानावरणादि अष्टकर्मों के समूह को कार्मणशरीर या कर्म कहते हैं। औदारिक, वैक्रियिक, आहारक और तैजस नामकर्म के उदय से होने वाले चार शरीरों को नोकर्म कहते हैं।

प्र.1121 विस्रासोपचय का लक्षण क्या है?

उत्तर समस्त आत्मप्रदेशों से बंधे कर्म नोकर्म के प्रत्येक परमाणु पर जीवराशि से अनन्तगुणे विस्रसोपचय रूप परमाणु सम्बद्ध हैं, जो कर्म या नोकर्म रूप तो नहीं हैं, परन्तु कर्म या नोकर्म होने के लिए उम्मीदवार हैं, उन परमाणुओं को विस्रसोपचय कहा जाता है।

प्र.1122 कर्म और नोकर्म का संचय कब और कैसे हुआ करता है?

उत्तर उत्कृष्ट योग को आदि लेकर जो-जो सामग्री उस-उस कर्म या नोकर्म के उत्कृष्ट संचय में कारण है तत्-तत् सामग्री के मिलने पर औदारिकादि पाँचों ही शरीर वालों के उत्कृष्ट स्थिति के अन्त समय में अपने-अपने कर्म और नोकर्म का उत्कृष्ट संचय (तद्योग्य परमाणुओं का मिलना) होता है।

प्र.1123 कर्मों के उत्कृष्ट संचय में छह आवश्यक कारण कौन-से होते हैं?

उत्तर कर्मों के उत्कृष्ट संचय में छह आवश्यक कारण-

१.भवाद्धा-भव या पर्याय सम्बन्धी परिभ्रमण का उत्कृष्ट काल भवाद्धा है।

२. आयुष्य- भुज्यमान (वर्तमान) आयु या स्थिति आयुष्य है।

३. योग- मन, वचन और काय वह योग है।

४. संक्लेश- कषाय विशेष रूप परिणाम संक्लिष्ट या संक्लेश है।

५. अपकर्षण- कर्म प्रदेशों की स्थिति और अनुभाग का अपवर्तन या घटना अपकर्षण है।

६. उत्कर्षण- कर्म प्रदेशों की स्थिति और अनुभाग का बढ़ना उत्कर्षण है।

प्र.1124 औदारिक आदि पाँच शरीरों की उत्कृष्ट स्थिति कितनी-कितनी है?

उत्तर उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः औदारिक शरीर की तीन पल्योपम, वैक्रियिक शरीर की तेतीस सागरोपम, आहारक शरीर की अन्तर्मुहूर्त्त, तैजस शरीर की छ्यासठ सागरोपम और कार्मण शरीर की उत्कृष्ट स्थिति सामान्यतया सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। (क्योंकि अधिक स्थिति में कम समाहित हैं) किन्तु विशेष रूप से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तराय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। मोहनीय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ा कोड़ी सागरोपम है। नाम, गोत्र कर्म की उत्कृष्ट स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। नाम, गोत्र कर्म की उत्कृष्ट स्थिति मात्र तेतीस सागरोपम है।

प्र.1125 औदारिक शरीर का उत्कृष्ट संचय कहाँ और कब होता है?

उत्तर औदारिक शरीर का उत्कृष्ट संचय तीन पल्योपम की आयु वाले देवकुरु तथा उत्तरकुरु में उत्पन्न होने वाले तिर्यंच और मनुष्यों के चरम (अंतिम), द्विचरम (उपान्त्य) समय में होता है।

प्र.1126 वैक्रियिक शरीर का उत्कृष्ट संचय कहाँ होता है?

उत्तर वैक्रियिक शरीर का उत्कृष्ट संचय, बाईस सागरोपम की आयु वाले आरण और अच्युत स्वर्ग के ऊपर के विमानों में रहने वाले देवों के ही होता है।

प्र.1127 अन्य देवों में उत्कृष्ट संचय क्यों नहीं होता है?

उत्तर क्योंकि वैक्रियिक शरीर का उत्कृष्ट योग तथा उसके योग्य अन्य सामग्रियाँ अन्यत्र अनेक बार उपलब्ध नहीं होती हैं।

प्र.1128 आहारक शरीर का उत्कृष्ट संचय कब होता है?

उत्तर आहारक शरीर का उत्कृष्ट संचय आहारक शरीर का उत्थान (वृद्धि) करने वाले प्रमत्त विरत के ही होता है।

प्र.1129 कार्मण शरीर का उत्कृष्ट संचय कब होता हे?

उत्तर कार्मण शरीर का उत्कृष्ट संचय अनेक बार नरकों में भ्रमण करके सप्तम पृथिवी में उत्पन्न होने वाले जीव के होता है।

प्र.1130 प्रमत्तयोगियों के कौन-से योग में सबसे कम योगियों का प्रमाण है?

उत्तर एक समय में आहारक काययोग वाले जीव अधिक से अधिक चौवन होते हैं और आहारक मिश्र काययोग वाले अधिक से अधिक सत्ताईस होते हैं।

प्र.1131 तैजस शरीर का उत्कृष्ट संचय कहाँ और कब होता है?

उत्तर तैजस शरीर का उत्कृष्ट संचय सप्तम पृथिवी में दूसरी बार उत्पन्न होने वाले जीव के होता है।

प्र.1132 कौन-सी गति में कौन-से वेद वाले होते हैं?

उत्तर नरक गति में नपुंसक वेद, देवगति में पुरुष और स्त्रीवेद, मनुष्यगति में भोगभूमिजों के स्त्री-पुरुषवेद, कर्मभूमिजों के तीनों वेद, तिर्यञ्चगति में भोगभूमिजों के स्त्री-पुरुषवेद, कर्मभूमिजों के तीनों वेद पाये जाते हैं।

प्र.1133 कौन-से जीवों में द्रव्य व भाव वेद सम ही पाया जाता है?

उत्तर देव, नारकियों ओर भोगभूमिज मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में द्रव्यवेद और भाववेद की समानता पाई जाती है।

प्र.1134 कौन-से जीवों में द्रव्य व भाव वेद विषम भी पाया जाता है?

उत्तर कर्मभूमिज मनुष्य और तिर्यञ्चों में वेद विषमता भी पायी जाती है। अर्थात् किन्हीं में तो जैसा द्रव्यवेद होता है वैसा ही भाव वेद होता है, और किन्हीं में द्रव्यवेद अन्य और भाव वेद अन्य हुआ करता है।

प्र.1135 एक ही पर्याय में भाववेद का परिवर्तन सम्भव है क्या?

उत्तर नहीं! जिस जीव के जिस-किसी विवक्षित पर्याय में जो भाववेद प्राप्त हुआ है, वहीं भाववेद जीवन भर तक रहता है, बदलता नहीं है। (धवला.पु. १/३४८)

प्र.1136 तीनों वेदों की बाधाओं से सम्बन्धित आगमिक उदाहरण कौन-से हैं?

उत्तर पुरुषवेद की बाधा तृण की आग सदृश है। स्त्रीवेद की बाधा करीष (कंडे) की आग सदृश है और नपुंसक वेद की बाधा ईंट पकाने वाले अवे की आग सदृश होती है। (अर्थात् उत्तरोत्तर वृद्धि को लिए हुए हैं)

प्र.1137 द्रव्यवेद कौन-से गुणस्थान तक पाया जाता है?

उत्तर द्रव्यवेद की अपेक्षा स्त्रीवेद और नपुंसकवेद पाँचवें गुणस्थान तक तथा पुरुषवेद चौदहवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

प्र.1138 भाववेद कौन-से गुणस्थान तक पाया जाता है।

उत्तर भाववेद की अपेक्षा तीनों वेदों का सद्भाव नवम गुणस्थान के पूर्वार्ध तक रहता है। इसके आगे वाले जीव वेद रहित होते हैं।

प.1139 वेदों पर वैराग्य का क्या प्रभाव होता है?

उत्तर वैराग्य भावना के बल से वेद सत्ता में रहते हुए भी उनका कार्य नहीं देखा जाता है।

प्र.1140 कषायों का उदय कौन-कौन से गुणस्थानों तक पाया जाता है?

उत्तर अनन्तानुबन्धी कषाय का उदय दूसरे गुणस्थान तक, अप्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय चौथे गुणस्थान तक, प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय पाचवें गुणस्थान तक और संज्वलन कषाय का उदय दसवें गुणस्थान तक पाया जाता है। हास्यादि छह नोकषायों का उदय आठवें गुणस्थान तक और शेष तीन वेदरूप कषायों का उदय नवम गुणस्थान के सवेद भाग तक पाया जाहा है। ग्यारहवें गुणस्थान से कषाय रहित अकषाय अवस्था होती है।

प्र.1141 मतिज्ञान के तीन सौ-छत्तीस भेद किस तरह बनते हैं?

उत्तर अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा ये मतिज्ञान के भेद हैं इनमें प्रत्येक के बारह विषय हैं- बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनि:सृत, अनुक्त, ध्रुव, एक, एक विध, अक्षिप्र, नि:सृत, उक्त और अध्रुव। इस तरह ४ × १२ = ४८ भेद होते हैं। पाँच इन्द्रिय और मन की सहायता से होने कारण ४ ×१२ ×६ = २८८ भेद हो जाते हैं। अवग्रह दो तरह का होता है अर्थावग्रह और व्यंजनावग्रह। उपर्युक्त भेद अर्थावग्रह की अपेक्षा से बनते हैं। व्यञ्जनावग्रह चक्षु और मन के बिना होता है, उसमें ईहा, अवाय और धारणा ज्ञान नहीं होता अत: बारह विषयों के चक्षु और मन के बिना होने वाला अवग्रह मात्र की अपेक्षा १२ × ४ = ४८ भेद व्यञ्जनावग्रह के हो जाने से सब मिलाकर (२८८ + ४८= ३३६) तीन सौ छत्तीस भेद हो जाते हैं।

प्र.1142 श्रुतज्ञान के मुख्य दो भेद कौन-से हैं?

उत्तर श्रुतज्ञान के मुख्य दो भेद एक अक्षरात्मक दूसरा अनक्षरात्मक रूप से कहे गये हैं।

प्र.1143 अनाक्षरात्मक श्रुतज्ञान किसको कहते हैं?

उत्तर जो ज्ञान अक्षर के निमित्त से उत्पन्न नहीं होता किन्तु लिंग (चिह्न) के निमित्त से उत्पन्न होता है, उसे अनक्षरात्मक अथवा लिंगजश्रुत ज्ञान कहते हैं। जैसे- शीतल वायु का स्पर्श होने पर शीतल वायु

जानना तो मतिज्ञान है और उसके पश्चात् ही वात प्रकृति वाले को यह शीतलवायु हानिकारक है, ऐसा जानना अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

प्र.1144 अक्षरात्मक श्रुतज्ञान किसको कहते हैं?

उत्तर अक्षर रूप शब्द के निमित्त से उत्पन्न होने वाले श्रुतज्ञान को अक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे–जीव है ऐसा कहने पर श्रोत्रेन्द्रिय के निमित्त से जो शब्द का ज्ञान हुआ वह तो मतिज्ञान है और उस ज्ञान के अनन्तर यह जीव नामक पदार्थ है, ऐसा जो ज्ञान हुआ वह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

प्र.1145 श्रुतज्ञान के बीस भेद कौन–से हैं?

उत्तर श्रुतज्ञान के बीस भेद इस प्रकार हैं– पर्याय, पर्यायसमास, अक्षर, अक्षरसमास, पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्तिक, प्रतिपत्तिकसमास, अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभृत–प्राभृत, प्राभृत–प्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व और पूर्वसमास। (गो.सा.जी.का.गा.३१७)

प्र.1146 पर्याय–ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के जो सबसे जघन्य ज्ञान होता है उसको पर्यायज्ञान कहते हैं।

प्र.1147 सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के किस काल में पर्यायज्ञान पाया जाता है?

उत्तर सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के अपने–अपने जितने भव अर्थात् एक अन्तर्मुहूर्त्त में अधिक से अधिक छह हजार बारह भव सम्भव हैं। उनमें भ्रमण करके अन्त के अपर्याप्त शरीर को तीन मोड़ों के द्वारा ग्रहण करने वाले जीव के प्रथम मोड़े के समय में यह सर्व जघन्य ज्ञान होता है।

प्र.1148 पर्यायज्ञान में क्या विशेषता है?

उत्तर पर्यायज्ञान के आवरण करने वाले कर्म के उदय का फल पर्यायज्ञान में नहीं होता, किन्तु इसके अनन्तर वाले पर्यायसमास ज्ञान पर होता है। उस जीव में पर्याय रूप इतना जघन्य ज्ञान हमेशा निरावरण तथा प्रकाशमान रहता है।

प्र.1149 पर्यायज्ञान पर आवरण स्वीकार करने में क्या बाधा है?

उत्तर पर्यायज्ञान पर आवरण मानने से जीव के ज्ञानोपयोग का अभाव होने से जीव का ही अभाव हो जावेगा। अतः सूक्ष्म निगोदिया जीवन का पर्यायज्ञान निरावरण माना गया है। (गो.सा.जी.का.गा. ३१९, ३२०)

प्र.1150 लब्ध्यक्षर रूप श्रुतज्ञान का आधार क्या है?

उत्तर सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के उत्पन्न होने के प्रथम समय में उत्पन्न होने वाले लब्ध्यक्षर रूप पर्याय ज्ञान का आधार स्पर्शन इन्द्रिय जन्य मतिज्ञान है। (जी.का.गा.३२२)

प्र.1151 अक्षरात्मक श्रुतज्ञान के कितने भेद हैं?

उत्तर अक्षरात्मक श्रुतज्ञान के दो भेद हैं एक अंगप्रविष्ट और दूसरा अंगबाह्य।

प्र.1152 अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान किसको कहते हैं?

आ.श्री आर्जवसागरजी के आचार्य पदारोहण दिवस पर संघस्थ साधुगण वंदना करते हुए।

जैसी नगर में आ.श्री का पाद प्रक्षालन करते हुए भक्तगण।

जैसी नगर में त्रिदिवसीय कार्यक्रम में मानस्तम्भ मस्तकाभिषेक करते हुए भक्तगण।

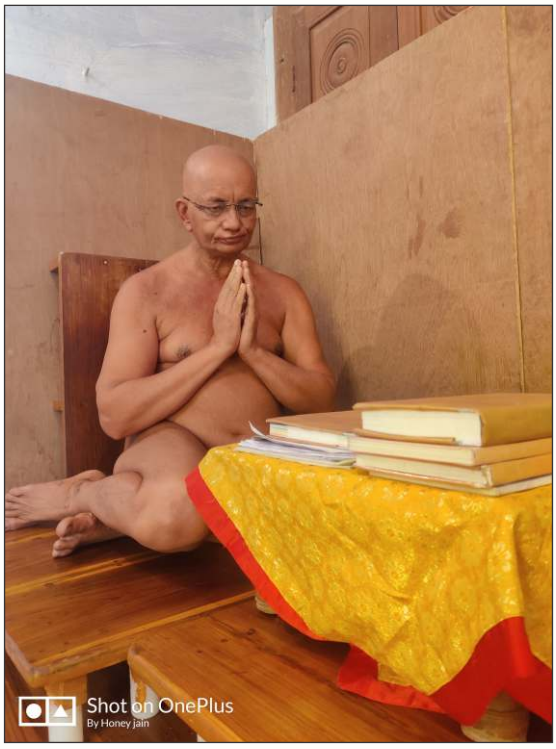

जैसी नगर में वंदन स्तुति करते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के विहार के समय चरण वंदना करते हुए मुनि श्री विलोकसागर एवं मुनिश्री विबोधसागर जी।

शास्त्री बार्ड, सागर में आ. श्री आर्जव सागर जी के मंच का भार संभालते हुए मुकेश ढाना।

शास्त्रीवार्ड सागर सिद्धचक्र महामंडल विधान के समय समवशरण में विराजमान आ.श्री आर्जव गुरु ससंघ दिनांक 6 फरवरी 2021।

शास्त्रीवार्ड सागर के सिद्ध चक्र मण्डल विधानोपरान्त नगर रथ परिक्रमा में आ.श्री आर्जवसागरजी ससंघ।

शास्त्री वार्ड सागर में सि. च. मं. विधान के दौरान आ.श्री आर्जवसागरजी से आशीष लेने आये विधायक शैलेन्द्र जैन।

वर्णी कॉलोनी सागर में आ.श्री आर्जवसागरजी का पाद प्रक्षालन करते हुए भक्तगण।

शास्त्री वार्ड, सागर में सि. च. विधान के अवसर पर ललितपुर से आये भक्तगण दर्शन लाभ लेते हुए।

अंकुर कॉलोनी में मुनि श्री सुधासागर जी के गृहस्थाश्रम के भ्राता ऋषभ जैन आ.श्री आर्जवसागरजी का पाद प्रक्षालन करते हुए।

अंकुर कालोनी सागर में आ.श्री आर्जवसागरजी के लिए अर्घ चढ़ाते हुए भक्तगण।

अंकुर कॉलोनी, सागर में सिद्धचक्र महामण्डल विधान में आ.श्री आर्जवसागर जी के प्रवचन सुनते हुए श्रद्धालुगण।

आ. गुरूवार आर्जवसागरजी के समक्ष आर्यिका मृदुमतिजी आर्यिका प्रतिभामतिजी के लिए स्वलिखित सहित्य भेट करते हुये।

आ. श्री आर्जवसागरजी के लिए आहार देते हुए ऋषभ जैन अंकुर कॉलोनी सागर।

अंकुर कॉलोनी सागर में आ.श्री आर्जवसागरजी से 12 वर्षीय सल्लेखना व्रत लेते हुए माता मायाबाई जैन।

आ.श्री आर्जवसागरजी का पड़गाहन करते हुए अरविन्द जैन सपरिवार अंकुर कॉलोनी सागर।

अंकुर कालोनी सागर में आ.श्री आर्जवसागरजी के लिए आहार देते हुए माता माया बाई जैन।

नेहा नगर सागर में सिद्धचक्र विधान महोत्सव में समवशरण का दर्शन करते हुए आचार्यश्री ससंघ।

नेहा नगर सागर में विधान के दौरान समवशरण में विराजमान आ. श्री आर्जवसागरजी ससंघ।

नेहानगर सागर में सिद्ध चक्र मंडल विधान के दौरान सौधर्मइन्द्र कमल कुमार कंदवावाले सपरिवार मंगल कलश प्राप्त करते हुए व. ब्र. अनिल भैया।

नेहानगर सागर में सि. च. मं. विधान के पाण्डाल में विराजमान आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज ससंघ।

उत्तर तीर्थंकर भगवान ने सर्वज्ञत्व रूप अपने केवलज्ञान के द्वारा विश्व के सर्व पदार्थों को ज्ञातकर अपनी दिव्य ध्वनि के द्वारा जो समवशरण स्थित जीवों को उपदेश दिया, उस जिनवाणी को उनके साक्षात् शिष्य मुनीश्वर गणधर परमेष्ठी ने स्मृतिपूर्वक बारह अंगों में संकलित (गूँथित) किया, जिसका नाम अंगप्रविष्ट हुआ।

प्र.1153 अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान के बारह भेद कौन-से हैं?

उत्तर अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान के बारह भेद-१. आचारांग, २. सूत्रकृतांग, ३.स्थानांग, ४. समवायांग, ५. व्याख्याप्रज्ञप्तिांग, ६. धर्मकथांग, ७. उपासकाध्ययनांग, ८. अन्तकृद्दशांग, ९. अनुत्तरोप-पादिकदशांग, १०. प्रश्नव्याकरणांग, ११. विपाक सूत्रांग और १२. दृष्टिवादांग।

प्र.1154 बारहवें दृष्टिवादांग के कितने भेद हैं?

उत्तर **दृष्टि के पाँच भेद हैं**- १. परिकर्म, २. सूत्र,३. प्रथमानुयोग, ४. पूर्वगत और ५. चूलिका।

इसमें परिकर्म के पाँच भेद हैं- १. चंद्रप्रज्ञप्ति, २. सूर्यप्रज्ञप्ति, ३. जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, ४. द्वीपसागर प्रज्ञप्ति और ५. व्याख्याप्रज्ञप्ति।

पूर्वगत के भी चौदह भेद हैं- १. उत्पादपूर्व, २. आग्रायणीय पूर्व, ३. वीर्यप्रवाद पूर्व, ४. अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्व, ५. ज्ञानप्रवाद पूर्व, ६. सत्यप्रवाद पूर्व, ७. आत्मप्रवाद पूर्व, ८. कर्मप्रवाद पूर्व, ९. प्रत्याख्यान पूर्व, १०. वीर्यानुवाद पूर्व, ११. कल्याणवाद पूर्व, १२. प्राणावाद पूर्व, १३. क्रिया विशालपूर्व और १४. त्रिलोक बिन्दुसार पूर्व।

चूलिका के भी पाँच भेद हैं- १. जलगता, २. स्थलगता, ३. मायागता, ४. आकाशगता और ५. रूपगता। (विशेष वर्णन-ज.ध., भा.१, पृ. १२२-१३२)

प्र.1155 अंगबाह्य श्रुतज्ञान किसको कहते हैं?

उत्तर आर्ष परम्परा के आचार्यों ने, अल्पबुद्धि वाले शिष्यों पर अनुकम्पा कर उन अंग-पूर्वों के आधार पर जो ग्रन्थ रचे वे अंगबाह्य ग्रन्थ; अंगबाह्य श्रुत कहलाते हैं।

प्र.1156 अंगबाह्य श्रुतज्ञान के चौदह भेद कौन-से हैं?

उत्तर अंगबाह्य श्रुतज्ञान के चौदह भेद- १. सामायिक, २. चतुर्विंशतिस्तव, ३. वन्दना, ४. प्रतिक्रमण, ५. वैनयिक, ६. कृतिकर्म, ७. दशवैकालिक, ८. उत्तराध्ययन, ९. कल्पव्यवहार, १०. कल्पाकल्प, ११. महाकल्प्य, १२. पुण्डरीक, १३. महापुण्डरीक और १४. निषिद्धिका।

प्र.1157 द्वादशांग में वर्णित एवं अपुरुक्त अक्षरों के कारण स्वरूप चौसठ मूल वर्ण कौन-से होते हैं?

उत्तर तेतीस व्यञ्जन, सत्ताईस स्वर और चार योगवाह इस तरह कुल चौंसठ वर्ण द्वादशांग में वर्णित हैं।

तेतीस व्यञ्जन-	क् ख् ग् घ् ङ्	त् थ् द् ध् न्
	च् छ् ज् झ् ञ्	प् फ् व् भ म्
	ट् ठ् ड् ढ् ण	य् र् ल् व्, श् ष् स् ह्
सत्ताईस स्वर	ह्रस्व-	अ इ उ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ

दीर्घ- आ ई ऊ ॠ ऌ ए ऐ ओ औ

प्लुत- आ ३, ई ३, ऊ ३, ऋ ३, ऌ ३, ए ३, ओ ३, औ ३

(गोम्मटसार जीव काण्ड गा.३५२ में ए, ऐ ओ, औ को ह्रस्व भी माना है तथा दीर्घ स्वरों के आगे तीन (३) का अंक लिखकर प्लुत की संज्ञा दी है)।

चार योगवाह- अनुस्वार, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपधमानीय। (उदा.-कं, कः, $\overset{x}{\text{क}}$, $\overset{13}{\text{प}}$)

प्र.1158 द्वादशांग के एक पद में कितने अक्षर होते हैं?

उत्तर द्वादशांग के एक पद में सोलह सौ चौंतीस कोटि तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी (१६३४,८३,०७८८८) अक्षर होते हैं।

प्र.1159 द्वादशांग के समस्त पदों का प्रमाण कितना है?

उत्तर द्वादशांग के समस्त पद एक सौ बारह कोटि बयासी लाख अट्ठावन हजार पाँच (११२, ८२, ५८००५) हैं।

प्र.1160 अंगबाह्य के अक्षरों का प्रमाण कितना है?

उत्तर अंगबाह्य के अक्षरों का प्रमाण आठ करोड़ एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर (८०१०८१७५) है।

प्र.1161 अवधिज्ञान के दो भेद कौन-से हैं?

उत्तर अवधिज्ञान के १.भवप्रत्यय और २.गुणप्रत्यय रूप से दो भेद हैं।

प्र.1162 भव प्रत्यय अवधिज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर जिस ज्ञान के उत्पन्न होने में भव ही निमित्त हो अर्थात् जन्म लेते ही जो अवधिज्ञान प्रकट हो जाता है उसे भवप्रत्यय अवधिज्ञान कहते हैं।

प्र.1163 भव प्रत्यय अवधिज्ञान किन जीवों के प्रकट होता है और किससे प्रकट होता है।

उत्तर भवप्रत्यय अवधिज्ञान देव, नारकियों और तीर्थंकरों को प्रकट होता है और सर्वाङ्ग से प्रकट होता है।

प्र.1164 गुणप्रत्यय अवधिज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर जो अवधिज्ञान सम्यग्दर्शन और तपश्चरणादि गुणों या क्षयोपशम के निमित्त से उत्पन्न होता है, उसे गुणप्रत्यय या क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान कहते हैं।

प्र.1165 गुणप्रत्यय अवधिज्ञान किन जीवों के किससे उत्पन्न होता है?

उत्तर गुणप्रत्यय अवधिज्ञान किन्हीं-किन्हीं पर्याप्त मनुष्यों तथा संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के उत्पन्न होता है सभी के नहीं होता है और यह ज्ञान शङ्खादि चिह्नों से उत्पन्न होता है।

प्र.1166 गुणप्रत्यय या क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान के छह भेद कौन-से हैं?

उत्तर गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के छह भेद-

१.अनुगामी- जो अवधिज्ञान अपने स्वामी (अवधिज्ञानधारक जीव) के साथ जाये उसे अनुगामी अवधिज्ञान कहते हैं। इसके क्षेत्र, भव और उभय के भेद से तीन प्रकार होते हैं। (क) जो अवधिज्ञान

दूसरे क्षेत्र में भी अपने स्वामी के साथ जाता है वह क्षेत्रानुगामी अवधिज्ञान है। (ख) जो दूसरे भव में भी साथ जाये वह भवानुगामी है। (ग) जो क्षेत्र तथा भव दोनों में साथ जाये वह उभयानुगामी है।

२. **अननुगामी**- जो अवधिज्ञान अपने स्वामी के साथ न जाये उसे अननुगामी अवधिज्ञान कहते हैं। इसके भी क्षेत्राननुगामी, भवाननुगामी, उभयाननुगामी के भेद से तीन प्रकार होते हैं।

३.वर्धमान- जो शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की तरह अपने अन्तिम स्थान तक बढ़ता जाये उसे वर्धमान अवधिज्ञान कहते हैं।

४. हीयमान- जो कृष्णपक्ष के चन्द्रमा की तरह अपने अन्तिम स्थान तक घटता जाये उसे हीयमान अवधिज्ञान कहते हैं।

५.अवस्थित-जो सूर्यमण्डल के समान न घटे न बढ़े उसे अवस्थित अवधिज्ञान कहते हैं।

६.अनवस्थित- जो चन्द्रमण्डल की तरह कभी कम हो, कभी अधिक हो उसे अनवस्थित अवधिज्ञान कहते हैं।

प्र.1167 अवधिज्ञान के अन्य तरह से तीन भेद कौन-से हैं?

उत्तर अवधिज्ञान के अन्य विशिष्ट तरह के १. देशावधि, २.परमावधि और ३. सर्वावधि रूप से तीन भेद हैं।

प्र.1168 देशावधि ज्ञान किस गति में और किन जीवों के हो सकता है?

उत्तर देशावधि ज्ञान चारों गति के जीवों को हो सकता है और होकर छूट भी जाता है। अत: प्रतिपाति कहा जाता है।

प्र.1169 परमावधि और सर्वावधि अवधिज्ञान किन जीवों के होता है?

उत्तर परमावधि और सर्वावधि अवधिज्ञान चरम शरीरी (तद्भवमोक्षगामी) मुनिराजों के ही होता है, और यह अप्रतिपाति होता है।

प्र.1170 जघन्य देशावधिज्ञान अत्यल्प कितने क्षेत्र को जानता है?

उत्तर जघन्य देशावधिज्ञान सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के उत्पन्न होने के तृतीय समय में जो जघन्य अवगाहना होती है, उतने प्रमाण क्षेत्र को जानता है। अर्थात् मानव की दृष्टि को अगोचर है।

प्र.1171 उत्कृष्ट देशावधिज्ञान कितने क्षेत्र व कितने काल को जानता है?

उत्तर उत्कृष्ट देशावधिज्ञान सम्पूर्ण लोक को क्षेत्र की अपेक्षा जानता है तथा एक समय कम एक पल्योपम की बात को काल की अपेक्षा जानता है।

प्र.1172 सर्वावधिज्ञान का जघन्य, उत्कृष्ट द्रव्यादि का प्रमाण कितना है?

उत्तर सर्वावधिज्ञान का जघन्य द्रव्य किसी अपेक्षा से एक परमाणु है और किसी अपेक्षा से अनन्त परमाणुओं का स्कन्ध है तथा परमावधिज्ञान के उत्कृष्ट क्षेत्रादि से सर्वावधिज्ञान का क्षेत्रादि असंख्यात गुणा है।

प्र.1173 लोक के अधोभाग में अन्तिम नरक भूमि के नारकियों के अवधिज्ञान के विषय भूत क्षेत्र का

प्रमाण कितना है?

उत्तर सातवी भूमि में नारकियों के अवधिज्ञान के विषयभूत क्षेत्र का प्रमाण एक कोस है।

प्र.1174 लोक के ऊर्ध्वभाग में स्थित नव अनुदिश और पंच अनुत्तरों में स्थित देवों के अवधिज्ञान के विषयभूत क्षेत्र का प्रमाण कितना है?

उत्तर नव अनुदिश और पंच अनुत्तरों में स्थित देवों के अवधिज्ञान के विषयभूत क्षेत्र का प्रमाण सम्पूर्ण लोक (त्रस) नाड़ी है। (अवधिज्ञान का विषय का विशेष वर्णन देखिये इसी कृति में गति वर्णन)

प्र.1175 मन:पर्ययज्ञान के दो भेद कौन-से हैं?

उत्तर मन:पर्ययज्ञान के ऋजुमति और विपुलमति के भेद से दो भेद कहे जाते हैं।

प्र.1176 ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर जो परकीय (अन्य के) अवक्र (सरल) मन स्थित रूपी पदार्थ को विषय करें उसे ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान कहते हैं।

प्र.1177 विपुलमति मन:पर्ययज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर जो परकीय अवक्र या वक्र मन स्थित रूपी पदार्थ को जानता है और प्रश्न किये जाने पर या नहीं किये जाने पर भी मन:स्थित पदार्थ को विषय कर लेता है उसे विपुलमति मन:पर्ययज्ञान कहते हैं।

प्र.1178 मन:पर्ययज्ञान कहा से उत्पन्न होते हैं?

उत्तर शरीर में जहाँ द्रव्य मन होता है, उस स्थान पर आत्मा के जो प्रदेश हैं; वहाँ से मन:पर्ययज्ञान उत्पन्न होता है। (क.दी.,पृ.४७)

प्र.1179 मन:पर्ययज्ञान के स्वामी (धारक) कौन होते हैं?

उत्तर ऐसे मुनीश्वर जो सप्त ऋद्धियों में से किसी एक ऋद्धि के धारी हों और वर्धमान चारित्र रूप विशिष्ट चारित्र के धारी हों, वे मन:पर्ययज्ञान के स्वामी होते हैं।

प्र.1180 ऋजुमति और विपुलमति मन:पर्ययज्ञान में कौन-सी मौलिक विशेषताएँ हैं?

उत्तर ऋजुमति और विपुलमति मन:पर्ययज्ञान में १. विशुद्धता की तारत्म्यता की अपेक्षा, २.प्रतिपात-अप्रतिपात की अपेक्षा, ३.वक्रता-अवक्रता की अपेक्षा और चिन्तवन की अपेक्षा बड़ी मौलिक विशेषता पायी जाती है। जैसे- १.ऋजुमति की अपेक्षा विपुलमति मन:पर्ययज्ञान में अधिक विशुद्धता होती है। २.ऋजुमति होकर छूट जाता है, अत: प्रतिपाति कहा है जबकि, विपुलमति छूटता नहीं है अर्थात् केवलज्ञानोपत्ति का भी कारण है अत: अप्रतिपाति कहा गया। ३. ऋजुमति परकीय सरल मन से चिन्तित पदार्थ को जानता है, जबकि विपुलमति परकीय चिन्तित, अचिन्तित और अर्धचिन्तित पदार्थ को विषय बना लेता है।

प्र.1181 ऋजुमति और विपुलमति मन:पर्ययज्ञान कितने-कितने क्षेत्र व भव के परकीय मनोगत पदार्थों का विषय करते हैं?

उत्तर ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान का जघन्य क्षेत्र दो-तीन कोस और उत्कृष्ट सात-आठ योजन है तथा जघन्य

काल दो-तीन भव और उत्कृष्ट काल सात-आठ भव है। विपुलमति मन:पर्ययज्ञान का जघन्य क्षेत्र आठ- नौ योजन तथा उत्कृष्ट क्षेत्र मनुष्य लोक प्रमाण (४५ लाख योजन) है। तथा जघन्य काल सात-आठ भव और उत्कृष्ट परकीय मनोगत विषय ग्रहण काल पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

प्र.1182 मन:पर्ययज्ञान का जो मनुष्यलोक विषय क्षेत्र बतलाया है वह वृत्त (गोल) रूप ग्रहण करता है या विष्कम्भ रूप?

उत्तर यहाँ मन:पर्यय ज्ञान के उत्कृष्ट विषय क्षेत्र मनुष्यलोक से मनुष्यलोक का विष्कम्भ ग्रहण करना चाहिए न कि वृत्त, क्योंकि मानुषोत्तर पर्वत के बाहर चारों कोणों में स्थित तिर्यंच और देवों के द्वारा चिन्तित त्रिकाल गोचर पदार्थ को भी विपुलमति मन:पर्ययज्ञानी जानते हैं। कारण यह है कि मन:पर्ययज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र ऊँचाई में कम होते हुए भी समचतुरस्र घनप्रतर रूप ४५ लाख योजन प्रमाण है। (गो.सा.गा.४५६, धवल पु.१३/३४३-३४४, धवल ९/६८, ज.ध.१/१७-१९)

प्र.1183 जैनागम संस्कार में वर्णित केवलज्ञान की परिभाषा से अन्य शब्दों में और भी कोई केवलज्ञान की परिभाषा प्रस्तुत कीजिये?

उत्तर अपने प्रतिपक्षी-चार घातिया कर्मों के नाश हो जाने से इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना निजात्मा से सम्पूर्ण पदार्थों के गुणों की त्रिकालवर्ती सर्व पर्यायों को जो एक ही क्षण में एक साथ जानता है, उसे केवलज्ञान कहते हैं। (तुलना करें- जैनागम संस्कार अ.१०,पृ.७९)

प्र.1184 केवलज्ञान को असहाय क्यों कहते हैं?

उत्तर केवलज्ञानी अरिहंत भगवान अतिन्द्रिय होते हैं, वे विश्व के चराचर पदार्थों को इन्द्रिय और मन (अनिन्द्रिय) की सहायता के बिना जानते हैं अत: सर्वज्ञ कहलाते हैं तथा उनका केवलज्ञान इन्द्रिय और मन के बिना पदार्थों को विषय करने वाला होने से तथा अन्यज्ञानों में सूर्य सम अकेला प्रतिभाषित होने के कारण असहाय कहा जाता है।

प्र.1185 केवलज्ञान के लिये सकल-प्रत्यक्ष और अवधिज्ञान तथा मन:पर्ययज्ञान के लिए विकल-प्रत्यक्ष क्यों कहा जाता है?

उत्तर केवलज्ञान द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की सीमा से अतीत अर्थात् असीम को विषय करने वाला होने से सकल प्रत्यक्ष ज्ञान कहलाता है और अवधि ज्ञान तथा मन:पर्यय ज्ञान द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव की सीमापूर्वक जानने वाले होने से विकल प्रत्यक्षज्ञान कहलाते हैं। केवलज्ञानी स्वआत्मा से रूपी और अरूपी सर्व पदार्थों को जानते हैं, परन्तु अवधि और मन:पर्ययज्ञानी स्वआत्मा से रूपी पर पदार्थों को जानते हैं।

प्र.1186 केवलज्ञान अकेला होता है यह बात ठीक है, परन्तु केवलज्ञान क्या अवधिज्ञान या मन:पर्ययज्ञान पूर्वक ही होता है ऐसा नियम है?

उत्तर नियम तो यह है कि केवल ज्ञान; मति और श्रुतज्ञान पूर्वक भी हो सकता है, मति, श्रुत और अवधिज्ञान

पूर्वक भी हो सकता है और मति, श्रुत, अवधि तथा मन:पर्ययज्ञान पूर्वक भी हो सकता है।

प्र.1187 कौन-कौन-से ज्ञान में कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं?

उत्तर कुमति, कुश्रुत और कुअवधिज्ञान प्रथम दो गुणस्थानों में होते हैं। किन्तु विशेषता यह है कि कुमति और कुश्रुतज्ञान एकेन्द्रिय आदि जीवों के भी पाये जाते हैं जबकि कुअवधिज्ञान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों के ही पाया जाता है। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान चौथे से बारहवें गुणस्थानों तक होते हैं। मन:पर्ययज्ञान छठे से बारहवें गुणस्थान तक होता है और केवलज्ञान तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानों में होता है तथा गुणस्थानातीत सिद्धों में भी रहता है?

प्र.1188 सामायिक संयम किसे कहते हैं?

उत्तर सर्व सावद्य योग का जीवन पर्यन्त के लिए त्याग करना सामायिक संयम कहलाता है। जैसे- ''मैं सर्व प्रकार के सावद्य योग का त्याग करता हूँ''।

प्र.1189 सावद्ययोग किसे कहते हैं?

उत्तर मन, वचन और काय इन तीनों की हिंसा जनक प्रवृत्ति को सावद्ययोग कहते हैं। अथवा असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, विद्या और शिल्प ये छह सावद्ययोग माने गये हैं। छह सावद्यकर्म करने वाले मनुष्य सावद्यकर्मार्य कहलाते हैं।

प्र.1190 सुयोग्य अल्पसावद्य कर्मार्य और महान असावद्य कर्मार्य कौन कहलाते हैं?

उत्तर अहिंसादि पंच अणुव्रतों को धारण करने वाले श्रावक-श्राविकाएँ सुयोग्य अल्प-सावद्य कर्मार्य कहलाते हैं तथा अहिंसादि पंच महाव्रतधारी दिगम्बर मुनिराज महान असावद्य कर्मार्य कहलाते हैं।

प्र.1191 सावद्य कर्मार्य के छह भेद कौन-से हैं?

उत्तर १.तलवार, धनुष आदि शस्त्र विद्या में निपुण असि कर्मार्य है। २. रुपये-पैसे की आमदनी, खर्च आदि के लेखे जोखे में निपुण मसि कर्मार्य है। ३. हल, कुलि (हाथ) दान्ती (नियंत्रण) आदि से कृषि करने वाले कृषि कर्मार्य है। ४. चन्दनादि सुगन्धित पदार्थों का, घृतादि का या रस व धान्यादि का तथा कपास, वस्त्र, मोती आदि अनेक तरह के द्रव्यों का क्रय-विक्रय करने वाले अनेक प्रकार के वाणकि कर्मार्य हैं तथा ६. धोबी, नाई, लुहार, कुम्हार और सुनार आदि शिल्प कर्मार्य हैं।

प्र.1192 सामायिक के विभिन्न प्रयुक्त प्रयोजनार्थ स्थान कौन-से हैं?

उत्तर मोक्षमार्ग में सामायिक का प्रयुक्त प्रयोजन तीन स्थानों पर होता है।

१. सर्व सावद्ययोग का त्याग कर अहो-रात्रिक (दिन-रात) के प्रत्येक धार्मिक आवश्यकों में सामायिक चारित्र या सामायिक संयम के रूप में सामायिक का प्रयोग होता है।

२. मुनियों के षट् आवश्यकों में त्रिकाल समता-समायिक जिसे निर्वृत्ति पूर्वक खड्गासन, पद्मासनादि में स्थित होकर किया जाता है उस काल के लिए सामायिक का प्रयोग होता है।

३. श्रावकों के सामायिक शिक्षा-व्रतों के पालन में त्रिकाल सामायिक हेतु सामायिक का प्रयोग होता है।

प्र.1193 छेदोपस्थापना संयम किसे कहते हैं?

उत्तर छेद अर्थात् अहिंसादि महाव्रत के भेद पूर्वक अपने आपको संयम में उपस्थित करना, अथवा छेद अर्थात् सामायिक चारित्र से चलित होने पर अपने आप को उपस्थापना अर्थात् पुनः उसी चारित्र में निज को उपस्थित या उपस्थापित करना छेदोपस्थापना संयम कहलाता है।

प्र.1194 परिहार विशुद्धि संयम किसे कहते हैं?

उत्तर जिस संयम में जीवहिंसा के परिहार के साथ विशिष्ट तरह की विशुद्धि पायी जाती है उसे परिहार विशुद्धि संयम कहते हैं।

प्र.1195 परिहार विशुद्धि संयम किसे प्राप्त होता है?

उत्तर जो भव्य जन्म से लेकर तीस वर्ष तक (गृहस्थ जीवन के) सुख से संतुष्ट होकर मुनि दीक्षा पूर्वक सामायिक, छेदोपस्थापना संयम धारण करते हैं तथा तीर्थंकर के पाद मूल में (समवसरण में) आठ वर्ष तक प्रत्याख्यानपूर्व का अध्ययन करते हैं, (जीवों की उत्पत्ति व स्थान आदि का ज्ञान कर लेते हैं) ऐसे मुनि के महान परिहारविशुद्धि नामक संयम प्रकट होता है। जिस संयम के फलस्वरूप उनके द्वारा किसी जीव का विघात नहीं होता है। ऐसे महान संयम के धारक मुनिश्वर तीन संध्याकालों को छोड़कर प्रतिदिन दो कोस विहार करते हैं।

प्र.1196 परिहार विशुद्धि संयम के धारक मुनीश्वर क्या रात्रि में भी गमन कर सकते हैं और वे वर्षायोग (चातुर्मास) करते हैं या नहीं?

उत्तर परिहार विशुद्धि संयम के धारक मुनि रात्रि में गमन नहीं करते हैं तथा उनके वर्षायोग में एक स्थल पर ठहरने का कोई नियम उपलब्ध नहीं होता है।

प्र.1197 सूक्ष्म साम्पराय संयम किसे कहते हैं?

उत्तर उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी चढ़ने वाले मुनि के जहाँ संज्वलन लोभ का अत्यन्त सूक्ष्म उदय रहता है, उन मुनिराज के संयम को सूक्ष्म साम्पराय संयम कहते हैं।

प्र.1198 यथाख्यात संयम किसे कहते हैं?

उत्तर समस्त मोहनीय कर्म का उपशम या क्षय हो जाने से जहाँ वास्तविक रूप से कहा गया है वैसा यथावस्थित आत्म स्वभाव का प्राप्त हो जाना यथाख्यात संयम कहलाता है।

प्र.1199 संयमासंयम किसे कहते हैं?

उत्तर अप्रत्याख्यानावरण कषाय के क्षयोपशम और प्रत्याख्यानावरण के उदय की तरतमता (हीनाधिकाता) से जो एकदेश चारित्र होता है उसे संयमासंयम कहते हैं।

प्र.1200 संयम और असंयम दोनों एक साथ किस अपेक्षा से होते हैं?

उत्तर जब स्थूल रूप पाँच अणुव्रत और तीन गुणव्रत, तथा चार शिक्षाव्रतों का पालन होता है तब संयम कहलाता है और सूक्ष्मरूप महाव्रतों का पालन नहीं होता अतः असंयम कहलाता है। ऐसी दोनों अवस्था में युगपत् संयम और असंयम जहाँ घटित हों उसे संयमासंयम कहा जाता है। (व्रतों का

वर्णन देखें जैनागम संस्कार अ.११,पृ.९२-९८)

प्र.1201 असंयम किसे कहते हैं?

उत्तर त्रस, स्थावर जीवों की हिंसा तथा पंच इन्द्रिय सम्बन्धी विषयों का त्याग न होना असंयम कहलाता है।

प्र.1202 संयममार्गणा में कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं?

उत्तर सामायिक और छेदोपस्थापना संयम छठे से लेकर नौवें गुणस्थान तक होते हैं। परिहार विशुद्धि संयम छठे और सातवें गुणस्थान में होता है सूक्ष्मसाम्पराय संयम के दसवें गुणस्थान में होता है। यथाख्यातसंयम ग्यारहवें से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक होता है। संयमासंयम पाचवें गुणस्थान में होता है। तथा असंयम प्रारम्भ के चार गुणस्थानों में होता है।

प्र.1203 दर्शन कब होता है और ज्ञान कब होता है?

उत्तर सामान्य अवलोकन का नाम दर्शन है, जो छदमस्थों के ज्ञान के पूर्व में हुआ करता है और केवलियों के युगपत् अर्थात् ज्ञान के साथ ही हुआ करता है। छदमस्थों का दर्शन पूर्वक विशेष जानने पर ज्ञान होता है।

प्र.1204 दर्शन तो चक्षुओं से देखने जैसी क्रिया है लेकिन चक्षु (नेत्रों) के अलावा वह अन्य इन्द्रियों से कैसे सम्भव है?

उत्तर सम्भव तो है; क्योंकि अन्य इन्द्रियाँ भी ज्ञान के पूर्व सामान्य को ग्रहण करती हैं जिसे दर्शन कहा जाता है, उसी दर्शन को ज्ञान के रूप में ग्रहण करते हुये कह दिया करते हैं कि मैंने स्पर्शनेन्द्रिय से हवा को देख लिया कि वह गर्म है या ठण्डी है। मैंने रसनेन्द्रिय से देख लिया कि कोई खाद्य वस्तु खट्टी है या मीठी है। मैंने घ्राणेन्द्रिय से देख लिया कि वस्तु सुगन्धित है या दुर्गन्धित तथा मैंने कर्णेन्द्रिय से देख लिया कि आवाज है कि नहीं है। या कोई किसी से कहता है कि बाहर देख कर आओ कि हवा चल रही है कि नहीं अथवा हवा ठण्डी है या गर्म है इत्यादि। सार यही है कि चक्षु व अन्य इन्द्रियों से भी देखने-जानने रूप कार्य हुआ करते हैं।

प्र.1205 चक्षु दर्शन का लक्षण क्या है?

उत्तर चक्षु इन्द्रिय से होने वाले ज्ञान से पूर्व पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे चक्षु दर्शन कहते हैं।

प्र.1206 अचक्षुदर्शन का लक्षण क्या है?

उत्तर चक्षु इन्द्रिय के अलावा अन्य इन्द्रियों और मन से होने वाले ज्ञान के पूर्व पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे अचक्षुदर्शन कहते हैं।

प्र.1207 अवधिदर्शन किसे कहते हैं?

उत्तर अवधिज्ञान के पूर्व जो पदार्थ का सामान्य प्रतिभास होता है, उसे अवधिदर्शन कहते हैं।

प्र.1208 केवल दर्शन किसे कहते हैं?

उत्तर केवलज्ञान के साथ समस्त पदार्थों का जो सामान्य प्रतिभास होता है उसे केवलदर्शन कहते हैं।

प्र.1209 दर्शन मार्गणा में कौन-कौन-से गुणस्थान घटित होते हैं?

उत्तर चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन प्रथम से बारहवें गुणस्थान तक होते हैं। अवधिदर्शन चौथे से बारहवें गुणस्थान तक होता है। केवलदर्शन तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में तथा उसके बाद गुणस्थानातीत सिद्धों में भी होता है।

प्र.1210 षट् लेश्याओं के नाम किसके समान वर्णों पर आधारित हैं?

उत्तर कृष्ण लेश्या काजल सदृश काले रंग पर, नील लेश्या नीलमणि सम नीले रंग पर, कापोत लेश्या कबूतर सदृश कापोती रंग पर, पीत लेश्या स्वर्ण सदृश पीले रंग पर, पद्मलेश्या गुलाबी रंग के कमल सम गुलाबी रंग पर और शुक्ल लेश्या शंख सदृश श्वेत रंग पर आधारित है।

प्र.1211 लेश्या के दो भेद कौन-से हैं?

उत्तर द्रव्य और भाव के रूप में लेश्या के दो भेद होते हैं।

१. शारीरिक वर्ण की अपेक्षा द्रव्य लेश्या कहलाती है।

२. आत्मिक परिणामों की अपेक्षा भाव लेश्या कहलाती है।

प्र.1212 चतुर्गति में कौन-से जीवों की कौन-सी द्रव्य लेश्या होती है?

उत्तर * सम्पूर्ण नारकियों का कृष्ण वर्ण।

* कल्पवासी या विमानवासी देवों का तत्-तत् स्थान योग्य भाव लेश्या रूपवर्ण।
* भवनत्रिक देवों के छहों वर्ण।
* मनुष्य और तिर्यञ्चों के छहों वर्ण।
* देवों की विक्रिया का, छहों लेश्याओं में से किसी एक लेश्यारूप वर्ण।
* उत्तम भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यञ्चों का सूर्य सदृश वर्ण।
* मध्यम भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यञ्चों का चन्द्र सदृश वर्ण।
* जघन्य भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यञ्चों का कदली(केले) सदृश हरित वर्ण।
* बादर जलकायिक जीवों का शुक्ल वर्ण
* बादर अग्नि कायिक जीवों का पीत वर्ण।
* घनोदधि वातवलय में वात कायिक जीवों का गोमूत्र सदृश वर्ण।
* घनवातवलय सम्बन्धित वातकायिक जीवों का मूंगा सदृश वर्ण।
* तनुवातवलय सम्बन्धित वात कायिक जीवों का अनेक वर्णों से समन्वित वर्ण।
* सम्पूर्ण सूक्ष्म जीवों के शरीर का कापोत वर्ण।
* विग्रहगति में सम्पूर्ण जीवों का शुक्ल वर्ण। और
* निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था वाले जीवों का कापोत वर्ण होता है। (क.दी.भा.१)

(नरक-गति और देव-गति के विवरण में उनकी भाव लेश्याओं का वर्णन किया जा चुका है।)

प्र.1213 मनुष्यों में कौन-सी भाव लेश्याएँ होती हैं?

उत्तर चतुर्थ गुणस्थान पर्यंत मनुष्यों में छहों लेश्याएँ, देशविरत, प्रमत्तविरत और अप्रमत्त विरत गुणस्थानवर्ती जीवों में तीन शुभ लेश्याएँ तथा अपूर्वकरण से सयोग केवली पर्यन्त मनुष्यों में एक शुक्ल लेश्या ही होती है। भोगभूमि में सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि मनुष्यों के पर्याप्त अवस्था में पीत आदि तीन शुभ लेश्याएँ होती हैं और निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में कापोत लेश्या का जघन्य अंश होता है।

प्र.1214 तिर्यञ्चों में कौन-कौन-सी भाव लेश्याएँ होती हैं?

उत्तर एकेन्द्रिय और विकलत्रय जीवों में कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्याएँ होती हैं। असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चों में एवं संज्ञी पञ्चेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चों में कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्याएँ होती हैं। असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचों में कृष्ण आदि चार लेश्याएँ होती हैं। संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचों में प्रथम से लेकर चतुर्थ गुणस्थान पर्यन्त छहों लेश्याएँ होती हैं। भोगभूमिस्थ पर्याप्त तिर्यंचों में पीत आदि तीन शुभ लेश्याएँ एवं निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में कापोत लेश्या का जघन्य अंश होता है।

प्र.1215 कौन-सी लेश्या किन गुणस्थानों में होती है?

उत्तर कृष्ण लेश्या, नील लेश्या और कापोत लेश्या चौथे गुणस्थान तक, तेजो लेश्या और पद्म लेश्या सातवें गुणस्थान तक और शुक्ल लेश्या तेरहवें गुणस्थान तक होती है।

प्र.1216 कृष्ण लेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर अत्यन्त क्रोधी होना, बैर भाव नहीं छोड़ना, भाण्डवचन बोलना, दयाधर्म से रहित होना, दुष्टस्वाभावी होना तथा किसी के वश न होना इत्यादि कृष्ण लेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1217 नील लेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर कार्य करने में मन्दता, बुद्धिहीनता, विवेक शून्यता, मायाचारिता और परिग्रह में अति आसक्तता इत्यादि नील लेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1218 कापोत लेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर दूसरों पर क्रोध करना, पर की निन्दा करना, अत्यधिक शोक करना, अत्यधिक भय करना, दूसरों से ईर्ष्या रखना, बहु-स्व-प्रशंसक होना, अविश्वास स्वभावी होना, निजगुण गायकों में संतोषी होना, हानि-लाभ में विवेक शून्यता होना, युद्ध में मरने का इच्छुक होना, आत्म प्रशंसकों को धन बाँटने वाला होना, और योग्य-अयोग्य का अविचारक होना इत्यादि कापोत लेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1219 पीत लेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर योग्यायोग्य का सुविचारक होना, सेव्य-असेव्य में विवेकपना होना, सर्व-जीवों पर उपकार भाव होना, तथा दया और दान में तत्परता का होना पीत लेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1220 पद्मलेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हें?

उत्तर त्याग तपस्या में अभिरुचि, भद्रता रूप परिणाम, उत्तम विचार, उद्यमशीलता, क्षमाशीलता, साधु व गुरुजनों की भक्ति-पूजा तथा सद्गुणानुवाद में लगनशीलता का होना पद्मलेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1221 शुक्ल लेश्या वाले जीवों के परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर सदा पक्षपात से रहितपना, निदान रहितपना, साम्य व्यवहारिकता, वीतराग-भाव में अभिरुचिता और पारिवारिक निर्मोहता इत्यादि शुक्ल लेश्या के परिणाम हैं।

प्र.1222 लेश्याओं के प्रसंग में कषायों की तरतमता का एक उदाहरण दीजियेगा।

उत्तर षट् लेश्याओं से संबन्धित एक वृक्ष के उदाहरण में वृक्ष से आम तोड़ने हेतु- १.वृक्ष को मूल से काटना, २.डाल काटना, ३.टहनी काटना, ४.कच्चे और पके आम वाले गुच्छे को तोड़ना, ५.मात्र पके हुये आमों को तोड़ना और ६.नीचे जमीन पर स्वयं गिरे हुए आमों को उठाना; क्रमशः कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल रूप लेश्याओं में होने वाली कषायों की तीव्रतम, तीव्रतर और तीव्र तथा मंद, मंदतर और मंदतम अवस्थाओं को दर्शाता है।

प्र.1223 भव्य कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर भव्य तीन प्रकार के होते हैं- १.निकट (आसन्न) भव्य, २.दूर भव्य और ३. दूरानुदूर (अभव्य सम) भव्य।

- जो कम से कम एक दो भव में और अधिक-से अधिक सात-आठ भवों में मोक्ष प्राप्त करने वाला हो, उसे निकट भव्य या आसन्न भव्य कहते हैं। जैसे- स्वर्ण पाषाण से स्वर्ण; पुरुषार्थ के माध्यम से प्राप्त हो जाता है।

-चिरकाल बाद अर्थात् जो अर्धपुद्गल परावर्तन (लघुअनन्तवत्) प्रमाण काल के भीतर मोक्ष प्राप्त करने वाला हो उसे दूर भव्य कहते हैं। जैसे- बन्ध्यापन के दोष से रहित स्त्री के बाह्य निमित्त के मिलने पर नियम से पुत्रोत्पत्ति होगी, वैसे ही इन जीवों का नियम से मोक्ष फल की प्राप्ति होगी।

-जो भव्य होने पर भी कभी मोक्ष प्राप्त न कर सके उसे दूरानुदूर (अभव्य सम) भव्य कहते हैं। ये दूरानुदूर भव्य जीव नित्यानिगोद में ही पाये जाते हैं। जैसे- बन्ध्यापने के दोष से रहित विधवा सती स्त्री में पुत्रोत्पत्ति की योग्यता होते हुए भी बाह्य निमित्त से दूर रहने पर कभी पुत्रोत्पत्ति नहीं होगी, वैसे ही नित्य निगोद में बाह्य सामग्री के अभाव होने से मोक्षफल की प्राप्ति नहीं होगी। और भी जैसे सिद्ध भगवान के निकट त्रिलोक को पलटाने की शक्ति होते हुए भी उस शक्ति की अभिव्यक्ति नहीं होती, उसी तरह दूरानुदूर भव्य की शक्ति प्रकट नहीं होती है।

प्र.1224 अभव्य किस तरह के कार्य के अयोग्य होते हैं?

उत्तर अभव्य जीव मोक्ष के साधन स्वरूप रत्नत्रय मय मोक्ष मार्ग के अयोग्य होते हैं। अतः उन्हें मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। जैसे- बन्ध्यता स्त्री को पुत्रोत्पत्ति हेतु निमित्त मिले या न मिले परन्तु पुत्रोत्पत्ति नहीं होगी। वैसे ही अभव्य जीवों को कभी मोक्ष फल की प्राप्ति नहीं होगी। अभव्य जीव पानी में

नहीं सीझने वाली टर्रा मूंग सदृश हुआ करते हैं। उनमें धर्म के किसी भी निमित्ति का प्रभाव कदापि नहीं पड़ता है।

प्र.1225 भव्य मार्गणा में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर भव्य जीव चौदह गुणस्थानों में रहते हैं और अभव्य जीवों का मात्र प्रथम गुणस्थान (मिथ्यात्व) ही रहता है।

प्र.1226 भव्यात्मा की क्या पहचान होती है?

उत्तर १. जिसे यह महसूस हो कि कहीं मैं अभव्य तो नहीं हूँ।
२. जो प्रीति चित्त के साथ धर्म-वार्ता उपदेशादि को सुनता है।
३. जिसका मन धार्मिक क्रियाओं में आह्लाद को प्राप्त है। और
४. जो धार्मिक कार्य स्वार्थ (संसार बढ़ाने) हेतु नहीं बल्कि परमार्थ (कर्म-निर्जरा और मोक्ष) हेतु करता है वह भव्यात्मा कहलाता है।

प्र.1227 अभव्यात्मा की पहचान क्या है?

उत्तर १. जिसे संसार खाली हो जाने की चिंता हो।
२. जो धर्म या धर्मकार्य से अतिदूर रहता हो।
३. जो धर्म या धर्मात्माओं की निंदा करता हो।
४. जो मात्र भोग व ख्याति के लिए धर्म करता हो।
५. जो दया भाव से रहित हो। और
६. जो उपकारक का उपकार न मानने वाला कृतघ्न हो, ऐसा जीव अभव्य हो सकता है।

प्र.1228 सर्व जीवों के मोक्ष होने पर यह संसार रिक्त (खाली) नहीं हो जावेगा क्या?

उत्तर नहीं! वैसे तो मोक्ष नहीं जाने वाले जघन्य युक्तानन्त अभव्य जीवों और अनन्तानन्त दूरानुदूर भव्य जीवों से यह संसार भरा रहेगा ही, परन्तु उन अनन्तानन्त जीवों से भी भरा रहेगा जो भव्य जीव अनन्तानंत राशि के रूप हैं, दूरभव्य हैं। एक निगोदिया के अन्दर अनंतनिगोद राशि अवगाहित है और ऐसे निगोदिया जीवों से यह लोक ठसाठस भरा हुआ है। अत: संसार जीव राशि से रिक्त होना असंभव है।

प्र.1229 निगोद राशि से निकलकर त्रसराशि में भ्रमण करने का काल अधिक-से अधिक कितना है?

उत्तर निगोद से निकलकर त्रस राशि में जन्म लेने काल साधिक (कुछ अधिक) दो हजार सागरोपम वर्ष है। इतने काल के बीच अगर मोक्ष नहीं हुआ तो पुन: निगोद में जन्म होता है, जहाँ एक श्वास में अठारह बार जन्म-मरण करते रहना पड़ता है।

प्र.1230 संसार-सागर से पार कराने वाला खेवटिया सदृश सम्यक्त्व का लक्षण करणानुयोग में किस रूप में बतलाया गया है?

उत्तर जिनेन्द्र भगवान के द्वारा उपदिष्ट या देशित सप्ततत्त्व, नव-पदार्थ, षड् द्रव्य और पञ्चास्तिकायों का

श्रद्धान करने को सम्यक्त्व कहते हैं। (सम्यक्त्व में सहायक कुछ विषयों का वर्णन द्रव्यानुयोग में भी किया जावेगा) [उपशम, वेदक या क्षायोपशमिक और क्षायिक सम्यक्त्व या सम्यग्दर्शन का वर्णन देखें जैनागम संस्कार अ.९, पृ ७५ पर तथा मिथ्यात्व, सासादन और मिश्र या सम्यग्मिथ्यात्व का वर्णन देखें जैनागम सं.अ.१८, पृ.१८२]

प्र.1231 प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन किसको प्राप्त होता है?

उत्तर जो जीव चारों गतियों में से किसी एक गति का धारक तथा भव्य संज्ञी पंचेन्द्रिय, पर्याप्तक, विशुद्धि-सातादि के बन्ध के योग्य परिणति से युक्त, जागृत-स्त्यानगृद्धि आदि (स्त्यानगृद्धि, प्रचला-प्रचला, निद्रा-निद्रा) निद्राओं से रहित, साकार उपयोग युक्त और शुभ लेश्या-पीत, पद्म, शुक्ल का धारक होकर करणलब्धि से युक्त होता है वह अनादि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है। (गो.सा.गा.६५२)

प्र.1232 लब्धियाँ कितनी और कौन-सी हैं?

उत्तर लब्धियाँ पाँच होती हैं- १.क्षयोपशम-लब्धि, २.विशुद्धि लब्धि, ३. देशना लब्धि, ४. प्रायोग्य लब्धि, और ५. करण लब्धि।

प्र.1233 क्षयोपशम लब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर जिस समय कर्मों का अनुभाग प्रतिसमय अनन्तगुणा घटता हुआ उदय में आता है तब क्षयोपशम लब्धि होती है। क्योंकि उत्कृष्ट अनुभाग के अनन्तवें भाग मात्र देशघाती स्पर्द्धकों का उदयाभाव रूप क्षय और उदय को न प्राप्त सर्वघाती स्पर्द्धकों का सद् अवस्था रूप उपशम की प्राप्ति का नाम क्षयोपशम लब्धि है।

प्र.1234 विशुद्धि लब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर क्षयोपशम लब्धि की प्राप्ति होने पर साता-वेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतियों के बंध में कारण जो धर्मानुराग रूप शुभ परिणाम होता है उसकी प्राप्ति का नाम विशुद्धि लब्धि है।

प्र.1235 देशना-लब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर छह द्रव्यों और नौ पदार्थों के उपदेश का लाभ देशना है, उस देशना से परिणत आचार्य आदि की प्राप्ति, उपदिष्ट अर्थ के ग्रहण, धारण और विचारण की शक्ति के समागम को देशनालब्धि कहते हैं।

प्र.1236 प्रयोग्य-लब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर उपर्युक्त तीन लब्धियों से युक्त जीव प्रति समय विशुद्धि के बल से आयु के अलावा शेष सात कर्मों की स्थिति अन्त:कोड़ा कोड़ी सागर प्रमाण मात्र शेष कर देता है, तथा पूर्व में जो अनुभाग था, उसमें अनन्त का भाग देने पर बहुभाग प्रमाण अनुभाग को छोड़कर शेष एक भाग प्रमाण अनुभाग को कर देता है। इस कार्य को करने की योग्यता के लाभ को प्रायोग्यलब्धि कहते हैं।

प्र.1237 करणलब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर पंचम लब्धि की प्राप्ति के समय आत्मा के अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम

उत्पन्न होते हैं, जिस कारण सम्यक्त्व के योग्य भव्यात्मा की तीनों करणों में क्रमशः निर्मल निर्मलतर और निर्मलतम अवस्था होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है, ऐसी सम्यक्त्व के पूर्व की अन्तिम लब्धि का नाम करण लब्धि कहलाता है।

प्र.1238 प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति किस तरह से होती है?

उत्तर अनिवृत्तिकरण का जो अन्तर्मुहूर्त्त काल है उसके व्यतीत होते हुए जब एक भाग काल शेष रहता है तब प्रथम सम्यक्त्व के अभिमुख हुआ अनादि मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व का अन्तरकरण करता है और सादि मिथ्यादृष्टि जीव दर्शन मोहनीय का अन्तकरण करता है। वह सत्ता में स्थित मिथ्यात्व प्रकृति के द्रव्य को सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृति रूप परिणमाता है, इस विधि से प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। (क.प्र.)

प्र.1239 प्रथमोपशम सम्यक्त्व के काल में क्या मरण होना सम्भव है?

उत्तर नहीं; प्रथमोपशम सम्यक्त्व के काल में किसी का मरण नहीं होता है।

प्र.1240 प्रथमोपशम सम्यक्त्व के छूटने पर क्या अवस्था होती है?

उत्तर उपशम सम्यक्त्व का अन्तर्मुहूर्त्त काल व्यतीत होने पर अनादि मिथ्यादृष्टि के तो मिथ्यात्व का उदय हो जाता है, तथा सादि मिथ्यादृष्टि या तो मिथ्यादृष्टि होकर वेदक (क्षायोपशामिक) सम्यक्त्व अथवा उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करता है या सम्यग्मिथ्यादृष्टि होकर वेदक सम्यक्त्व को प्राप्त करता है।

प्र.1241 अन्तरकरण किसको कहते हैं?

उत्तर जिस कर्म का अन्तरकरण करना हो उसकी प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति को छोड़कर मध्यवर्ती अन्तर्मुहूर्त्त मात्र स्थिति के निषेकों का अभाव करने को अन्तरकरण कहते हैं।

प्र.1242 मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व का अन्तरकरण कैसे करता है और उसे कितना काल लगता है?

उत्तर मिथ्यादृष्टि जब मिथ्यात्व कर्म का अन्तरकरण करता है, तब उसे अन्तर्मुहूर्त्त काल लगता है। वह अनादिकाल से उदय में आने वाले मिथ्यात्व कर्म को अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण स्थिति सम्बन्धी निषेकों को छोड़कर उससे ऊपर के अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण स्थिति के निषेकों को अपने स्थान से उठाकर कुछ निषेकों को प्रथम स्थिति (नीचे की स्थिति) सम्बन्धी निषेकों में मिला देता है और कुछ निषेकों को द्वितीय स्थिति (ऊपर की स्थिति) सम्बन्धी निषेकों में मिला देता है। इस तरह वह तब तक करता रहता है जब तक अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण स्थिति के पूरे निषेक समाप्त न हो जावें। जब मध्यवर्ती समस्त निषेक ऊपर की अथवा नीचे की स्थिति में दे दिये जाते हैं और प्रथम स्थिति तथा द्वितीय स्थिति के बीच का अन्तरायाम मिथ्यात्व कर्म के निषेकों से सर्वथा शून्य हो जाता है तब अन्तरकरण पूर्ण हो जाता है।

प्र.1243 वेदक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कैसे उत्पन्न होता है?

उत्तर अनन्तानुबन्धी कषाय का अप्रशस्त उपशम अथवा विसंयोजन होने पर और मिथ्यात्व तथा सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृति का प्रशस्त उपशम या अप्रशस्त उपशम अथवा क्षयोन्मुख होने पर तथा देशघाती

सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होने पर जो तत्त्वार्थ श्रद्धान होता है उसे वेदक सम्यक्त्व कहते हैं। इसी को क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भी कहते हैं। क्योंकि सर्वघाती अनन्तानुबन्धी कषाय मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व का उदयाभाव रूप क्षय तथा सदवस्था रूप उपशम होने पर और देशघाती सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होने पर वेदक सम्यक्त्व होता है। इससे इसी का दूसरा नाम क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है।

प्र.1244 अप्रशस्त उपशम या देशोपशम किसे कहते हैं?

उत्तर जिसमें विवक्षित प्रकृति उदय आने योग्य तो न हो किन्तु उसका स्थिति अनुभाग घटाया बढ़ाया जा सके अथवा संक्रमण वगैरह किये जा सके उसे अप्रशस्त उपशम या देशोपशम कहते हैं।

प्र.1245 प्रशस्त उपशम या सर्वोपशम किसको कहते हैं?

उत्तर जिसमें विवक्षित प्रकृति न तो उदय आने योग्य ही हो और न उसका स्थिति अनुभाग घटाया जा सके तथा न संक्रमण वगैरह ही किया जा सके उसे प्रशस्त उपशम या सर्वोपशम कहते हैं।

प्र.1246 वेदक सम्यग्दर्शन जीव के साथ कितने काल तक बना रह सकता है?

उत्तर वेदक सम्यग्दर्शन जीव के साथ जघन्य से अन्तर्मुहूर्त तक और उत्कृष्ट से छियासठ सागरोपम काल तक बना रह सकता है।

प्र.1247 क्षायिक सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति का क्रम किस प्रकार है?

उत्तर असंयत, देशसंयत, प्रमत्तसंयत अथवा अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्य सर्वप्रथम तो अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के अन्त में अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ का विसंयोजन करता है अर्थात् उन्हें बारह-कषाय और नव-नोकषाय रूप कर देता है। उसके पश्चात् दर्शन मोहनीय की क्षपणा का आरम्भ करता है।

प्र.1248 दर्शन मोहनीय की क्षपणा का आरम्भ कहाँ करता है?

उत्तर इस विषय के समाधान में तीन मत उपस्थित हैं-

१. दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय होने का प्रारम्भ केवली के मूल में कर्मभूमि का उत्पन्न होने वाला मनुष्य ही करता है तथा निष्ठापन सर्वत्र होता है। (गो.सा.जी.का.गाथा-६४८)

२. ढाई द्वीप-समुद्रों में स्थित पन्द्रह कर्म भूमियों जहाँ जिस काल में केवली तीर्थंकर होते हैं वहाँ उस काल में कर्मभूमिया मनुष्य (पुरुष) ही दर्शन मोहनीय की क्षपणा का आरम्भ करता है। (ष.खं. ६/१,९-८/सू.१२)

३. दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय का प्रारम्भ कर्म भूमिज मनुष्य; जिस काल में केवली होते हैं या श्रुतकेवली उनके पादमूल में ही करता है, किन्तु निष्ठापन चारों गतियों में हो सकता है। (ध.६/१,९-८,११/२४६/१)

प्र.1249 दर्शन मोहनीय की क्षपणा का प्रस्थापक कौन कहलाता है?

उत्तर दर्शन मोहनीय की क्षपणा के लिए किये गए अध:करण के प्रथम समय से लेकर जब तक जीव

मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के द्रव्य को सम्यक्त्व प्रकृति रूप संक्रमण करता है तब तक उसे दर्शन मोहनीय की क्षपणा का प्रस्थापक कहते हैं।

प्र.1250 दर्शन मोहनीय की क्षपणा का निष्ठापक कब कहलाता है?

उत्तर कृतकृत्य वेदक होने के प्रथम समय से लेकर आगे के समयों में दर्शनमोह की क्षपणा करने वाला जीव निष्ठापक कहलाता है।

प्र.1251 कृतकृत्य वेदक किसको कहते हैं?

उत्तर दर्शन मोहनीय की क्षपणा के लिए किये गये तीन करणों में से अनिवृत्तिकरण के अन्त समय में सम्यक्त्व प्रकृति के अन्तिम फालि के द्रव्य को नीचे के निषेकों में क्षेपण करने के पश्चात् अनन्तर समय से लगाकर अनिवृत्तिकरण काल के संख्यातवें भाग मात्र अन्तर्मुहूर्त्त कालपर्यन्त जीव कृतकृत्य वेदक कहा जाता है क्योंकि जिसने करने योग्य कार्य कर लिया है उसे कृतकृत्य कहते हैं सो दर्शन मोह की क्षपणा के योग्य कार्य अनिवृत्तिकरण काल के अन्त समय में हो ही जाता है। अतः वह कृतकृत्य वेदक कहा जाता है।

अथवा– क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख होता हुआ मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धि चतुष्क इन छह प्रकृतियों का क्षय कर चुकता है, मात्र सम्यक्त्व प्रकृति का उदय जब शेष रह जाता है तब वह कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि कहलाता है। यह सब कार्य मात्र अन्तर्मुहूर्त्त में होता है।

प्र.1252 दर्शन मोह की क्षपणा का निष्ठापन कहाँ करता है?

उत्तर दर्शन मोहनीय की क्षपणा का आरम्भ करने वाला मनुष्य कृतकृत्य वेदक होने के पश्चात् आयु का क्षय होने से यदि मरण को प्राप्त होता है तो सम्यक्त्व ग्रहण करने से पहले बाँधी हुई आयु के अनुसार चारों गतियों में उत्पन्न होकर दर्शनमोहनीय की क्षपणा को पूर्ण करता है। उसमें इतना विशेष है कि कृतकृत्य वेदक के काल के चार भाग करके उनमें से यदि प्रथम भाग में मरण करे तो नियम से देव पर्याय में ही जन्म लेता है, दूसरे भाग में मरण करे तो देव या मनुष्य पर्याय में उत्पन्न होता है, तीसरे भाग में मरण करे तो देव, मनुष्य या तिर्यञ्च पर्याय में उत्पन्न होता है और चौथे भाग में मरण करे तो चारों गतियों में से किसी भी गति में जन्म लेता है।

प्र.1253 क्षायिक सम्यग्दृष्टि की संसार में रहने की कितनी स्थिति होती है?

उत्तर क्षायिक सम्यग्दृष्टि की संसार में रहने रूप भवस्थिति जघन्य से अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट रूप से चार भव या आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त्त कम दो पूर्व कोटी और तैंतीस सागरोपम वर्ष है।

प्र.1254 क्षायिक सम्यग्दृष्टि की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति कैसे घटित होती है?

उत्तर उपशम या क्षयोपशम सम्यग्दर्शन की तरह क्षायिक सम्यग्दर्शन उत्पन्न होकर छूटता नहीं है। फिर भी क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न होने के पश्चात् क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव के संसार में रहने की अपेक्षा से क्षायिक सम्यक्त्व की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त कही है, क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि बनते ही मुनि

बन एवं केवलज्ञान को भी पाकर मोक्ष को पा लेता है तब अन्तर्मुहूर्त्त की भवस्थिति पूर्ण हो जाती है और क्षायिक सम्यक्त्व अखण्ड रहते हुए सिद्धों की अनन्तकालिक स्थिति प्रारम्भ हो जाती है।

उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त-आठवर्ष कम दो पूर्व कोटी और तैंतीस सागरोपम वर्ष है क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव प्रथम तो उस ही भव से मोक्ष पा लेता है जिस भव से उसने दर्शन मोह का क्षय करके क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त किया है। यदि क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करने से पूर्व उसने परभव सम्बन्धी आयु बाँध ली हो तो वह तीसरे भव से मुक्त हो जाता है और यदि उसने मनुष्य या तिर्यञ्च की आयु बाँधी हो तो चौथे भव में अवश्य मुक्त हो जाता है। भव के साथ सम्यक्त्व की स्थिति पूर्ण होते हुये भी सम्यक्त्व मोक्षावस्था में साथ चला जाता है और कभी क्षायिक सम्यक्त्व का अभाव नहीं होता है।

प्र.1255 क्षायिक सम्यक्त्व किन गुणस्थानों में रहता है?

उत्तर क्षायिक सम्यक्त्व- चतुर्थ से चौदहवें गुणस्थान तक रहता है। (और गुणस्थानातीत सिद्धों में भी रहता है।)

प्र.1256 क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कितने गुणस्थानों में पाया जाता है?

उत्तर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान से सातवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

प्र.1257 औपशमिक सम्यक्त्व कितने गुणस्थानों में रहता है?

उत्तर १. प्रथमोपशम सम्यक्त्व चौथे से सातवें गुणस्थान तक होता है।
२. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व चौथे से ग्यारहवें गुणस्थान तक होता है।

प्र.1258 द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कब, किसको और कैसे उत्पन्न होता है?

उत्तर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व उपशम श्रेणी चढ़ने के सम्मुख जीव को सातवें गुणस्थान में उत्पन्न होता है एवं क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन के पश्चात् उत्पन्न होता है। दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियों के उपशम के साथ-साथ चार अनन्तानुबन्धी कषायों के विसंयोजन अर्थात् अनन्तानुबन्धी का अप्रत्याख्यानादि रूप परिणमन होने से द्वितीयोपशम सम्यक्त्व प्रकट होता है।

प्र.1259 द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जब श्रेणी चढ़ने के निमित्त सातवें गुणस्थान में उत्पन्न होता है और उपशम श्रेणी आठवें से ग्यारहवें गुणस्थान तक होती है तब द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को चौथे, पाँचवे और छठे गुणस्थान में क्यों बतलाया गया है?

उत्तर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व पूर्वक श्रेणी का आरोहण करके जब जीव ग्यारहवें गुणस्थान से नीचे की ओर गिरता है तब छठे, पाचवें एवं चौथे गुणस्थान में भी पाया जाता है। इस अपेक्षा से द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन चतुर्थ गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान पर्यन्त पाया जाता है।

प्र.1260 द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन में मरण कब नहीं होता तथा मरण जब होता है तब कौन-सी गति होती है?

उत्तर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित उपशम श्रेणी पर चढ़ने वाले जीवों का अपूर्वकरण गुणस्थान में प्रथम

पाये में (भाग में) मरण नहीं होता है, सर्व गुणस्थानों (४ से ११ गु. तक) द्वितीयोपशम के काल में मरण होने पर जीव नियम से देवगति में जन्म लेता है।

प्र.1261 किस गति में कितने सम्यक्त्व होते हैं?

उत्तर प्रथम पृथवी में तीनों सम्यक्त्व पाये जाते हैं। किन्तु छह पृथिवियों में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं पाया जाता। तिर्यञ्चों, मनुष्यों और देवों में तीनों सम्यक्त्व पाये जाते हैं, किन्तु तिर्यंचनियों में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है। इसी तरह भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क देवों में तथा देवियों में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है।

प्र.1262 मिश्र सम्यक्त्व किसे कहते हैं?

उत्तर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से जहाँ ऐसे परिणाम हों जिन्हें न सम्यक्त्व रूप कह सकें और न मिथ्यात्व रूप अर्थात् जिस जीव के तत्त्व के विषय में श्रद्धान और अश्रद्धान रूप परिणाम हों, उसे मिश्र सम्यक्त्व कहते हैं। यह तीसरे गुणस्थान का नाम है।

प्र.1263 सासादन सम्यक्त्व किसे कहते हैं?

उत्तर प्रथमोपशम सम्यक्त्व के काल में कम-से-कम एक समय और अधिक से अधिक छहआवली प्रमाण काल शेष रहने पर अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ में से किसी एक प्रकृति का उदय आ जाने पर जिसने सम्यक्त्व की विराधना कर दी है, किन्तु मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं हुआ है उन आसादन रूप परिणामों को सासादन सम्यक्त्व कहते हैं। सासादन यह द्वितीय गुणस्थान का नाम है। ऐसा जीव निश्चित ही मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त करता है।

प्र.1264 मिथ्यात्व मार्गणा क्या है और इस भेद को सम्यक्त्व मार्गणा के भेदों में क्यों कहा है?

उत्तर जो जीव जिनेन्द्र देव के द्वारा देशित आप्त, आगम और पदार्थ का श्रद्धान नहीं करता है, परन्तु मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से कुगुरुओं के कहे हुए या बिना कहे हुए भी पदार्थ का विपरीत श्रद्धान करता है उसे मिथ्यात्व कहते हैं। इसी का नाम मिथ्यात्व गुणस्थान है। यह मिथ्यात्व ही सम्यक्त्व की पूर्वापर (सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व की व सम्यक्त्व छूटने के बाद की) अवस्था है अत: इसे भी उपचार से सम्यक्त्व मार्गणा में गर्भित किया गया है।

प्र.1265 संज्ञी जीव की पहचान हेतु जो शिक्षा, क्रिया, उपदेश और आलाप कहे जाते हैं उनका अर्थ क्या है?

उत्तर संज्ञी जीव की पहचान के चार हेतुओं का अर्थ हैं- १.शिक्षा-हित का ग्रहण और अहित का त्याग जिसके द्वारा किया जा सके उसको शिक्षा कहते हैं। २. क्रिया- इच्छापूर्वक हाथ पैर आदि के चलाने को क्रिया कहते हैं। ३. उपदेश- वचन अथवा चाबुकादि के द्वारा बताये हुए कर्त्तव्य को पर-उपदेश कहते हैं। और ४. अलाप- श्लोकादि के पाठ को आलाप कहते हैं। जो इन शिक्षादिकों को मन के अवलम्बन से ग्रहण-धारण करता है उसको संज्ञी कहते हैं और जिन जीवों में यह लक्षण घटित नहीं

होता उनको असंज्ञी जीव कहते हैं।

प्र.1266 संज्ञी-असंज्ञी की पहचान और किस तरह से होती है?

उत्तर जो जीव प्रवृत्ति करने के पूर्व अपने कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का विचार कर तथा तत्त्व और कुतत्त्व या अतत्त्व का स्वरूप समझ सके और उसका जो नाम रखा गया हो उस नाम के द्वारा बुलाने पर आ सके, उन्मुख हो अथवा उत्तर दे सके उसको समनस्क या संज्ञी जीव कहते हैं और इससे जो विपरीत है उसको अमनस्क या असंज्ञी जीव कहते हैं।

प्र.1267 संज्ञी मार्गणा में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर संज्ञी जीव के प्रथम से बारह गुणस्थान तक होते हैं। तथा असंज्ञी जीव का प्रथम गुणस्थान ही होता है। केवली संज्ञी-असंज्ञी उपदेश से रहित है।

(विभिन्न आचार्यों ने असंज्ञी जीवों में भी निर्वत्यपर्याप्त अवस्था में दूसरा सासादन गुणस्थान भी माना है इस तरह उनके मत में असंज्ञी जीवों के दो गुणस्थान मिथ्यात्व और सासादन होते हैं। गो.क. गा. ११३, पं.सं.पृ.७५)

प्र.1268 तेरहवें गुणस्थान के जीव संज्ञी मार्गणा में क्यों नहीं है?

उत्तर मन भी ईषत् (कथंचित्) इन्द्रिय है और तेरहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान् अतिन्द्रिय हैं, वे सर्व पदार्थों को आत्मा के केवलज्ञान से जानते हैं उन्हें मन की आवश्यकता नहीं, वे इन्द्रियों के प्रयोग से रहित हैं अत: उन्हें संज्ञी मार्गणा में नहीं लिया गया है। किसी एक मत से पंचेन्द्रिय छदमस्थों के मन एक अस्थायी रचना है। प्रमाण- (१)जैनेन्द्र सि.को.भा. ४, देखें मन/(२) देखिये-रा.वा./५/१८/६/४६८/३०

प्र.1269 आहारक होते समय जीव किसके योग्य क्या ग्रहण करता है?

उत्तर शरीर नामक नामकर्म के उदय से देह (औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इनमें से यथासंभव अर्थात् जब आवश्यक हो, किसी भी शरीर तथा वचन और द्रव्यमन रूप) बनने योग्य नोकर्म वर्गणाओं का जो ग्रहण होता है उसको आहार कहते हैं। (जी.का.गा.६६४)

औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इन तीन शरीरों में से किसी भी एक शरीर के योग्य वर्गणाओं को तथा वचन और मन के योग्य वर्गणाओं को यथा योग्य (आवश्यक) काल में जीव आहरण (ग्रहण) करता है अत: आहारक कहलाता है। (गो.सा.जी.का. ६६५)

प्र.1270 कौन-से जीव अनाहारक होते हैं, और कौन-से जीव आहारक होते हैं?

उत्तर विग्रहगति को प्राप्त होने वाले चारों गति सम्बन्धी जीव, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात करने वाले सयोग केवली, अयोगकेवली, समस्त सिद्ध इतने जीव तो अनाहारक होते हैं और इनको छोड़कर शेष सभी जीव आहारक होते हैं।

प्र.1271 आहार मार्गणा में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर आहारक जीव के प्रथम से तेरहवें गुणस्थान तक होते हैं। और अनाहारक जी के प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, त्रयोदश और चतुर्दशवाँ ऐसे पाँच गुणस्थान होते हैं।

प्र.1272 आहारक का जघन्य काल कितना है और वह कहाँ घटित होता है।

उत्तर आहारक का जघन्य काल तीन समय कम श्वास के अठारहवें भाग प्रमाण है। विग्रह गति के तीन समय कम, श्वास के अठारहवें भाग प्रमाण यह आहारक का जघन्य काल लब्ध्यपर्याप्तक सूक्ष्म निगोदिया जीव के घटित होता है।

प्र.1273 अनाहारक का जघन्य और उत्कृष्ट काल कितना है और वह कहाँ घटित होता है?

उत्तर अनाहारक का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। यह काल क्रमशः ऋजुगति में और तीन मोड़े वाली विग्रहगति में घटित होता है।

प्र.1274 सिद्ध गति में कौन-कौन-सी मार्गणाओं का अभाव है?

उत्तर सिद्धों में सिद्धगति के साथ केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व और अनाहारक मार्गणाओं को छोड़कर शेष मार्गणाओं का अभाव है।

शिक्षा में हो संस्कार व शाकाहार का संदेश

रचयिता : आचार्यश्री आर्जवसागर

भीकनगाँव स्थित हा.बो. कॉलोनी के व्यास परिसर स्कूल में आचार्यश्री आर्जवसागरजी के मुखारबिन्द से हुई अहिंसा पर अमृत वाणी में बताया कि माता-पिता के बाद शिक्षक ही बच्चों को सही ज्ञान व संस्कार दे सकता है। बच्चों में सही ज्ञान का विकास ही उसके भविष्य निर्माण में सहायक होता है। हमारी भारतीय संस्कृति ही ऐसी है जहाँ पर ज्ञान, तप, अहिंसा, धर्म व दया का पाठ पढ़ाया जाता है।

अहिंसा के बल पर ही महात्मा गाँधी ने इस देश को स्वतंत्रता दिलायी थी। हमारे धर्म में भी दया धर्म को मूल कहा गया है। ''जियो और जीने दो'' की मान्यता का संदेश पूरे विश्व में शांति का पाठ पढ़ा रहा है।

बच्चों को शिक्षा में संस्कार के साथ शाकाहार का भी पाठ पढ़ाएं। शुद्ध शाकाहार से मन व चित्त शांत व प्रसन्न रहता है और स्वस्थता प्रदान करता है। मांसाहार से मूक प्राणियों का वध हो रहा है तथा तरह-तरह की बीमारियाँ फैल रही हैं। अतः सभी को मांसाहार रोकने के प्रति जागरूक होना चाहिए। एक अण्डे के अध्ययन से पता चलता है कि एक अण्डे में 15000 छिद्र होते हैं जिससे वह श्वांस लेता है। अतः यह सिद्ध हो गया कि अण्डे में भी जीव है।

कई प्रकार के फास्ट फूड एवं सौन्दर्य प्रसाधन में भी गाय की चर्बी व असंख्य प्राणियों के रक्त व मज्जा का प्रयोग किया जाता है। अतः ऐसी वस्तुओं का तुरन्त त्याग करना चाहिए जिससे कि मूक जीवों की रक्षा हो सके और हमारा देश सर्वत्र अहिंसा मय बन सके तथा हमें पुनः अहिंसक पर्याय रूप जीवन की प्राप्ती हो सके।

साभार-आर्जव-वाणी

सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धान्त-भूषण पदवी हेतु त्रैमासिक धार्मिक प्रश्न-पत्र

समय : 15 दिन **(मार्च 2021)** अंक : 100

❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं। ❖ सभी प्रश्नों के उत्तर लाइन वाले पेपर्स पर पेरा बनाकर लिखें। ❖ उत्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही लिखें। ❖ उत्तर लिखकर काटे जाने या घिसे जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

प्र.1. ज्योतिषी देवों का गमन किस गति से होता है

प्र. 2. सूर्य, चन्द्रादि की किरणें किस स्वभाव वाली हैं?

प्र. 3. सूर्य में रहने वाले देव की आयु कितनी होती है?

प्र. 4. युग किसे कहते हैं, और युग का प्रारम्भ कब होता है?

प्र. 5. स्वर्ग की दूरी मध्यलोक से कितनी है?

प्र. 6. भरत क्षेत्र के तीर्थंकरों के आभूषण कौन-से स्वर्ग के मानस्तम्भ पर रहते हैं?

प्र. 7. वैमानिक देवों सम्बन्धी पटलों की संख्या कितनी है?

प्र. 8. स्वर्गों का सौधर्म आदि नाम क्यों है?

प्र. 9. ग्रैवेयक क्यों कहते हैं? या ग्रैवेयक का अर्थ क्या है?

प्र.10. सौधर्म आदि इन्द्रों की प्रधानदेवी की सहयोगी देवियाँ कितनी होती हैं?

प्र.11. स्वर्गों में देव दर्शन की क्या व्यवस्था होती है?

प्र.12. देव पर्याय में एक भव में मोक्ष जाने वाले कौन-कौन से भव्य जीव हैं?

प्र.13. अनुदिश एवं अनुत्तर विमानों में क्या सम्यग्दृष्टि ही जन्म लेते हैं?

प्र.14. सुख कितने प्रकार का होता है? नाम बतलायें?

प्र.15. तिर्यञ्च पर्याय में कौन-से देव उत्पन्न नहीं होते हैं?

प्र.16. संक्षेप-ओघ किसकी संज्ञा है?

प्र.17. चतुर्थ गुणस्थान में कौन-से भाव होते हैं?

प्र.18. सर्वार्थसिद्धि विमान से सिद्धशिला कितने ऊपर स्थित है?

प्र.19. अप्रमत्त गुणस्थान के कितने प्रकार हैं?

प्र.20. विसंयोजना किसे कहते हैं?

आधार :आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित-'**आगम-अनुयोग**', (प्रश्नोत्तर प्रदीप)

प्रश्न पत्र के पूर्व में दिये गये प्रश्नोत्तरों को पढ़कर उनका चिंतवन-मंथन कर उत्तर-पुस्तिका की पूर्ति करें।

परीक्षार्थी परिचय

नाम..... उम्र .....

पिता/माता/पति का नाम .....

पता .....

.....

मोबाईल/फोन नं. .....

सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धान्त-भूषण पदवी हेतु त्रैमासिक धार्मिक प्रश्न-पत्र

समय : 15 दिन (जून 2021) अंक : 100

❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं। ❖ सभी प्रश्नों के उत्तर लाइन वाले पेपर्स पर पेरा बनाकर लिखें। ❖ उत्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही लिखें। ❖ उत्तर लिखकर काटे जाने या घिसे जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

प्र.1. साकार उपयोग रूप ज्ञानोपयोग के कितने भेद होते हैं?

प्र. 2. दर्शनोपयोग के कितने भेद हैं?

प्र. 3. संज्ञी जीव की पहचान के चार हेतु कौन-से हैं?

प्र. 4. सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में निमित्त पाँच लब्धियाँ कौन-सी हैं?

प्र. 5. भव्य जीव कितने प्रकार के होते हैं?

प्र. 6. आहारक शरीर का क्या लक्षण क्या है?

प्र. 7. कौन-से जीवों के शरीर निगोदिया जीवों से प्रतिष्ठित होते हैं?

प्र. 8. कार्मण काययोग में कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं?

प्र. 9. एक निगोदिया जीव में कितने जीवों का निवास होता है?

प्र.10. नित्य निगोदिया और इतर निगोदिया जीवों के संसार भ्रमण का काल कितना होता है?

प्र.11. कौन-सी गति में कितने गुणस्थान होते हैं?

प्र.12. मार्गणा के कितने प्रकार हैं? नाम बताओ?

प्र.13. मार्गणा की परिभाषा क्या है?

प्र.14. भाव-प्राण कौन-से हैं?

प्र.15. प्राण की परिभाषा क्या है?

प्र.16. जीव की पहचान हेतु द्रव्य प्राण कौन-से हैं?

प्र.17. केवली भगवान कौन-सी नव लब्धियों के स्वामी होते हैं?

प्र.18. मुनिराज द्वारा उपशम श्रेणी कितनी बार प्राप्त की जा सकती है?

प्र.19. अनुभाग किसे कहते हैं?

प्र.20. सामायिक संयम किसे कहते हैं?

आधार :आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित-'**आगम-अनुयोग**', (प्रश्नोत्तर प्रदीप)

प्रश्न पत्र के पूर्व में दिये गये प्रश्नोत्तरों को पढ़कर उनका चिंतवन-मंथन कर उत्तर-पुस्तिका की पूर्ति करें।

परीक्षार्थी परिचय

नाम..... उम्र .....

पिता/माता/पति का नाम .....

पता .....

.....

मोबाईल/फोन नं. .....

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु परीक्षार्थी के लिए नियमावली

1. उपर्युक्त पदवी हेतु परीक्षार्थी की उम्र कम-से-कम 13 वर्ष पूर्ण और अधिक-से-अधिक आंखों की दृष्टि और लेखनी के स्थिर रहने तक रहेगी।
2. परीक्षार्थी अवश्य रूप से सप्त-व्यसनों अथवा मद्य, मधु, मांस का त्यागी एवं तीर्थंकर व उनकी जिनवाणी का श्रद्धालु होना चाहिए।
3. जो महानुभाव भाव-विज्ञान पत्रिका के सदस्य हैं उन्हें परीक्षा सामग्री प्रश्नोत्तर रूप में भाव-विज्ञान पत्रिका के साथ संलग्न रूप से सतत रूप से चार वर्षों तक प्राप्त होती रहेगी।
4. चारों अनुयोगों के शास्त्रों सम्बन्धी क्रमशः प्राप्त होने वाले प्रश्नोत्तरों तथा अंत में दिये गये प्रश्न-पत्र को स्वयं पढ़कर हल करें और प्रेषित करें तथा अन्य जनों तक भी परीक्षा में भाग लेने की जानकारी अवश्य देने का पूर्ण प्रयास करें। (इस कार्य हेतु इंटरनेट का भी उपयोग कर सकते हैं।)
5. जो महानुभाव पत्रिका के सदस्य नहीं हैं उन्हें प्रश्नोत्तर रूप सामग्री प्राप्त करने हेतु डाक व्यय का भुगतान स्वतः करना होगा।
6. परीक्षार्थी के लिए यह आवश्यक होगा कि वे प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र पाते ही एक माह के अन्तर्गत साफ-सुथरे रजिस्टर के पेपर्स पर पूर्ण शुद्धता और विनयपूर्वक उत्तर लिखकर निम्नलिखित पते पर भेजने का उपक्रम करें।
7. उत्तर पुस्तिका पर अंक (नम्बर) देने का भाव उत्तर-पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता और लिखावट आदि पर निर्भर करेगा।
8. परीक्षार्थी से ऑनलाइन या फोन द्वारा उत्तर पूछने की पहल भी की जा सकती है अतः अपने पते के साथ ई-मेल एड्रेस या मोबाईल/फोन नं. अवश्य लिखें।
9. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
10. परीक्षार्थी प्रश्नों के उत्तर स्वतः अपनी लिखावट में ही लिखें, अन्य किसी के नाम से उत्तर पुस्तिका भरकर प्रेषित किये जाने पर हमारे परीक्षा बोर्ड द्वारा उसे पदवी हेतु मान्य नहीं किया जावेगा।
11. कदाचित् किसी भव्य द्वारा किसी विशेष परिस्थिति में परीक्षा न दे सकने के कारण और उनके आग्रह किये जाने पर उन्हें प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था परीक्षा-बोर्ड द्वारा की जा सकेगी।
12. सम्यग्ज्ञानभूषण एवं सिद्धांतभूषण पदवी सम्बन्धी उत्तीर्णता प्राप्त करने वाले भव्य गणों को भगवान महावीर आचरण संस्था समिति के द्वारा दो या चार वर्षों में प्रमाण पत्र सह सम्मानित किया जावेगा।
13. प्रश्नोत्तरी व प्रश्न-पत्र मंगवाने हेतु परीक्षा-बोर्ड के निम्न लिखित पदवीधारी से सम्पर्क करें:-

भाव-विज्ञान पत्रिका के	भ. महावीर आचरण संस्था	भ.महावीर आचरण संस्था
प्रधान सम्पादक	समिति के मंत्री	समिति के अध्यक्ष
डॉ. अजित जैन	श्री राजेन्द्र जैन	श्री महेन्द्र जैन
मो. 7222963457	मो. 7049004653	मो. 7999246837

14. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित करें:-
सम्पादक, भाव-विज्ञान, एम आई जी-8/4, गीतांजली कॉम्पलैक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल 462003 (म.प्र.)

गतांक से आगे.....

प्रागैतिहासिक-प्राग्वैदिक जैन धर्म और उसके सिद्धान्त

-श्रीनाथूलालजी जैन शास्त्री

अध्यात्मवाद

मिथ्यात्व राग-द्वेष आदि जो समस्त विकल्प समूह हैं, उनका त्याग अपनी दृष्टि में होकर जो निज शुद्ध आत्मा में प्रवृत्ति है, वह अध्यात्म कहलाता है। अध्यात्मवादी दर्शन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि परमात्मा कहीं अन्यत्र नहीं है। प्रत्येक चेतन परमात्मा का रूप है। शरीर एक मंदिर है, जिसके भीतर आत्मबल से परमात्मा का निवास है। उसे बाहर खोजना भयंकर भूल है। मानव जब दीन-हीन बनकर संसार के खोज में तू कहाँ भटक रहा है? वह सुख तेरे अन्दर है, किन्तु तुझे उसका परिज्ञान नहीं। इस देह रूपी गृह में चिन्तामणि रत्नरूपी आत्मा छुपी है। क्षीरसागर में रहकर यदि कोई प्यासा रहता है तो इसमें क्षीरसागर का क्या दोष है? अनन्त सुख के आधारभूत आत्मतत्त्व को पाकर भी जिसका मिथ्यात्व दूर नहीं हो सकता और उसका अज्ञान दूर न हो सका, जिसमें जाग्रत होने की बुद्धि नहीं उस मोह मुग्ध आत्मा को कौन जगा सकता है? आत्मा के शुद्ध स्वरूप को जानने के लिए अन्तर में विवेक की ज्योति जगाना होगी। बिना विवेक (भेद ज्ञान) के मात्र शारीरिक क्रिया कांड का मूल्य एक शून्य बिन्दु से बढ़कर कुछ नहीं। जब मनुष्य के भीतर आत्मविज्ञान की निर्मल गंगा बहती है, तभी उसका जीवन पावन बनता है।

सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र इन तीनों का मिलकर मोक्षमार्ग है और दर्शन, ज्ञान और चारित्र आत्मा के निजगुण हैं। वे आत्मा के सिवाय अन्यत्र नहीं रहते। जो निजगुण होता है व गुणों से पृथक् नहीं रह सकता। दर्शन के साथ ही ज्ञान गुण की सत्ता भी आत्मा में त्रैकालिक है। जहाँ आत्मा है वहाँ चारित्र भी आत्मा का गुण विद्यमान रहता है।

अध्यात्मवाद द्वारा जीवन का वास्तविक रहस्य जाना जा सकता है। वही जीवन का मूल्यांकन करता है कि जीवन क्या है? जगत् क्या है? उन दोनों का क्या संबंध है? जीवन जीने के लिए है, किन्तु पवित्रता से जीने के लिए है। यह पवित्रता उस आत्मा का धर्म है, जो प्रबुद्ध है। जिसे अपने शुभ-अशुभ तथा उपादेय हेय का सम्यक् परिज्ञान है। जो अपने हिताहित का विवेक रखता है, वही प्रबुद्ध चेतन है, वही जाग्रत जीवित आत्मा है और वही उन्नत जीव है।

वर्तमान भौतिक सभ्यता जीवन के उच्चतम मूल्यों की प्रतीक नहीं हो सकती। वर्तमान विज्ञान द्वारा निर्धारित मूल्य जीवन के संरक्षण में सहयोग प्रदान करने में सक्षम नहीं हो सकते। आज के मानव का विश्वास जीवन के शाश्वत मूल्यों से उठ गया है, अत: जीवन में विश्वास, विचार और आचार तीनों बदल गये हैं।

हम विज्ञान का दोष न मानकर आधुनिक भोगवादी प्रवृत्ति के कारण व पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से हमारी जीवन प्रणाली में जो पतनोन्मुखी परिवर्तन देख रहे हैं और अपने जीवन में अनास्था, अनाचार और अशांति। हममें त्याग, प्रेम, विश्वास की भावना दृष्टिगोचर नहीं हो रही है। हम निराशा, संकीर्णता, अंधविश्वास

और ध्वंसात्मक प्रवृत्ति के दलदल में फंस गये हैं। मनुष्य के पतन के इस गर्भ से निकालने के लिए आज प्रगतिशील एवं रचनात्मक अध्यात्मवाद की आवश्यकता है। आज के मानव को वही धर्म एवं दर्शन शांति और संतोष प्रदान कर सकता है जो आत्म ज्ञान से युक्त हो। जिसमें संसार के समस्त प्राणियों को समान भाव से देखने की क्षमता हो। वह आत्मा का धर्म हमारी संस्कृति का प्राणभूत तत्त्व है। वह हमारे अन्दर विद्यमान है। अपनी अध्यात्म शक्ति को अपने जीवन की भूमि पर उतारने का पुरुषार्थ हमें ही करना है। हमें अपने जीवन में आत्मोद्धार स्वरूप की उपलब्धि के लिए निश्चयात्मक आत्म दृष्टि के साथ सच्चे देव, सच्चे शास्त्र और सच्चे गुरु को अपना पथ निर्देशक बनाना है। वे हमारी साधना के अवलंबन, सहायक और प्रकाश स्तंभ रहें। इस व्यवहार दृष्टि को भी हमें विस्मरण नहीं करना है। दोनों दृष्टियों में समन्वय और सन्तुलन रखना हमारा कर्त्तव्य है।

यह हमें सदैव ध्यान रखना है कि जीवन का सर्वांगीण विकास अहिंसा की पीठिका पर होगा। मानव जीवन के निर्माण की दिशा और जीवन कला का संदेश हमें जैन अध्यात्म विचारधारा से प्राप्त होगा। जैन धर्म का जैन विशेषण भले ही हटा दिया जाए, (या हटा दिया हो), परन्तु मनुष्य की प्रसुप्त आत्मा को जाग्रत करने और मंगलमय आदर्श प्रस्तुत करने की क्षमता इसी धर्म में है। [हमें तीर्थंकर जिनेन्द्र भगवान से प्राप्त हुई अहिंसात्मक एवं आध्यात्मिक जीवनशैली के गौरव हेतु जैन कुलीन प्रत्येक व्यक्ति के नाम के साथ जैन शब्द अवश्य लगाना चाहिए, जैन शब्द के आगे-पीछे गोत्र लिखने में कोई बाधा नहीं।]

मानवता और जीवन की समस्याओं को हल करने की प्रेरणा यही धर्म दे सकता है। आचार्य समंतभद्र के शब्दों में जैसे संसार की नदियों के बहाव का मार्ग चाहे अलग-अलग दिखता हो, परन्तु उन सबकी विश्रान्ति समुद्र में है। अनेकांत दर्शन की यही विशेषता है कि वह समस्त दर्शनों के परस्पर विरोध को दूर करता हुआ समन्वय रूप है।

जैन धर्म वासनाओं, विकारों और बुराइयों पर विजय प्राप्त करने, उन्हें जीतने, उनका मुकाबला करने का संदेश देता है, वह हमें जिन या जिनेन्द्र की सार्थकता बताता है।

कर्म सिद्धांत

तेजाब, शोरा, गंधक आदि के मिलने पर रासायनिक प्रक्रिया शुरू होती है। हल्दी और चूना मिलने पर लाल रंग बन जाता है। सुवर्ण, चाँदी, पीतल, तांबा आदि धातुओं को मिलाकर एक सोने की रकम तैयार हो जाती है। इसी तरह कर्मों का जीव के साथ मिलने से रासायनिक (केमिकल एक्शन) प्रक्रिया (बंध) आरंभ होती है। जीव के भावों की विविधता से ही विशाल वटवृक्ष के सदृश कार्य उत्पन्न हो जाता है। कोई प्राणी मनुष्य होता है, इस पर्याय के पूर्व पर्याय की मनोवृत्ति में मनुष्यवृत्ति के बीज विद्यमान होने से गृहीत कर्मवर्गणा मनुष्य संबंधी सामग्री को प्राप्त करा देती है। आत्मा और कर्मवर्गणाओं का समूह दोनों ही सूक्ष्म हैं। उस सूक्ष्म में अनंत प्रकार वैज्ञानिक कार्य के परिणमन की शक्ति है। जिस प्रकार अणु आकार की अपेक्षा लघु है, किन्तु उससे हजारों विशाल बमों से अधिक कार्य करने की शक्ति है। इसी प्रकार इन्द्रिय अगोचर कर्मशक्ति अद्‌भुत कार्य दिखाती है। यह कर्म अनंत शक्ति वाले आत्मा के अनंत ज्ञान दर्शन आदि गुणों को ढांक कर अक्षर के अनंतवें भाग तक बना देता है। इस कर्मशक्ति का ही प्रभाव है, जो पेड़, लट, चींटी, मक्खी, भैंस, हाथी आदि का

आकार-प्रकार प्राप्त होता है।

कर्म क्या है? जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन छः द्रव्यों में पुद्गल (अजीव) द्रव्य जो रूप, रस, गंध, स्पर्श, सहित है उसके 23 प्रकारों में कार्मण, आहार, तैजस, भाषा और मन इन वर्गणाओं को जीव अपनी वैभाविक शक्ति सहित रागादि भावों के कारण आकर्षित करता है। इनमें प्रथम कार्मण वर्गणा और शेष चार नोकर्म वर्गणा कहलाती हैं। अनंतानंत परमाणु पुंज को वर्गणा कहते हैं। ये वर्गणा समस्त संसार में व्याप्त हैं। जीव के रागादि भावों से इनका जीव के साथ संबंध होता है, इसी को कर्म कहते हैं। जैसे पात्र विशेष में प्रविष्ट विविध रस वाले बीज, पुष्प, फल मदिरा रूप में परिणमन करते हैं, उसी प्रकार योग (मन,वचन, काय) और क्रोधादि कषाय के कारण आत्मा में स्थित कर्म वर्गणायें कर्म रूप में परिणत होती हैं। जैसे मेघ के अवलंबन से सूर्य किरणें इन्द्रधनुष रूप विभिन्न परिणमन करती है। यह अशुद्ध जीव का कर्मरूप पुद्गल के साथ अनादि से संबंध चला आ रहा है, जिससे जीव दुःखी-सुखी होकर संसार में भ्रमण कर रहा है। कार्मण वर्गणायें भी ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय आठ कर्मरूप परिणमन करती हैं। जैनधर्मानुसार जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल इन छः द्रव्यों में जीव चेतन और शेष अचेतन ये दो तत्त्व हैं। जीव और पुद्गल ये दो परिस्पंदात्मक क्रियाशील हैं, शेष द्रव्य निष्क्रिय हैं। उनमें प्रदेश संचलन (क्रिया) नहीं होती। जीव पुद्गल में प्रदेशों के हलन-चलन रूप क्रिया से ही परस्पर बंध होता है। लोहे को चुम्बक आकर्षित करता है, उसी प्रकार वैभाविक शक्तिवाला जीव अपनी अनादिकालीन संसारदशा में रागादि भावों से कार्मण वर्गणा और नोकर्म वर्गणाओं को आकर्षित करता है।

जीव के रागादि भावों का निमित्त पाकर कर्मरूप परिणमन योग्य पुद्गल-स्कंध कर्मभाव को प्राप्त होता है। यह जीव के रागादि का और कर्मों का परस्पर निमित्त नैमित्तिक भाव होने से सामान्य रूप से अनादि तथा विशेष रूप से सादि आश्रव बंध होता रहता है। ''सकषायत्वात् जीवः कर्मणोयोग्यान् पुद्गलानादत्ते स बंधः'' (तत्त्वार्थसूत्र अ. ८/२) जीव कषाय सहित होने से कर्मरूप होने योग्य पुद्गलों को (कार्मण वर्गणाओं को) ग्रहण करता है, उसे बंध कहते हैं।

अन्य मत :-

कर्म विषयक अन्य मान्यतायें भी हैं जैसे-

''जैसा बोओ वैसा काटो''

कर्मणा वध्यते जन्तुः, विद्यया तु प्रमुच्यते

प्राणी कर्म से बंधता है और विद्या (ज्ञान) से छूटता है याने मोक्ष प्राप्त करता है।

(महाभारत शांति, 840-7)

तुलसी काया खेत है, मन-सा भयो किसान।

पाप पुण्य दोउ बीज है, बुबै सो लुने निदान॥

वैशेषिक दर्शन आत्मा के गुणों में धर्म अधर्म याने पुण्य-पाप को मानता है। ये दोनों उनके मत में

अमूर्तिक हैं। इत्यादि अनेक प्रमाण कर्म के संबंध में उपलब्ध हैं, परन्तु कर्म की क्रिया आदि व्याकरण संबंधी विविध अर्थ यथा ''योग कर्मसु कौशलं'' व ''सन्यास कर्मयोगश्च'' (गीता) आदि के अतिरिक्त, जैसा पुद्गल रूप कार्मण वर्गणा द्वारा कर्म बंधते हैं, यह कोई नहीं मानता। यह कर्म बंध रासायनिक प्रक्रिया है, जैसे हम भोजन करते हैं और उसका रस, रक्त, माँस, मेदा, अस्थि, मज्जा और शुक्र इन 7 धातुरूप क्रमशः परिणमन प्राकृतिक रूप से होता है। यही प्रक्रिया कर्म के संबंध में जानना चाहिए।

बंध का लक्षण कह चुके हैं। यह बंध चार प्रकार है–

1. प्रकृति अर्थात् स्वभाव नीम का स्वभाव कडुवा और ईख का स्वभाव मीठा होता है। उसी तरह ज्ञानावरणादि कर्मों की प्रकृति ज्ञानदर्शन आदि आत्मगुणों को ढकना है।

2. स्थिति अर्थात् आत्मा के साथ कर्मों के रहने की मर्यादा।

3. अनुभाग अर्थात् कर्मों की फल देने की शक्ति की हीनाधिकता।

4. बंधने वाले कर्मों की संख्या।

इन सब में प्रथम में नामों का कथन कहा है। चौथे में बंध का भी इसके आगे है। शेष में कर्मों की स्थिति व अनुभाग का वर्णन आत्मा के भावों के अनुसार कर्मशास्त्र में विस्तार से है।

कर्मद्रव्य जीव के भावों का निमित्त पाकर आठ कर्मरूप परिणमता है, उसका बंटवारा इस प्रकार है। आठ मूल प्रकृतियों में आयु का हिस्सा थोड़ा है। नाम गोत्र का समान किन्तु आयु से अधिक भाग है। अंतराय, दर्शनावरण, ज्ञानावरण तीनों का उससे अधिक किन्तु समान है। मोहनीय का उनसे अधिक भाग है। वेदनीय का मोह से अधिक भाग है। वेदनीय, सुख-दुःख का कारण है अतः निर्जरा भी अधिक होती है, इससे सर्वकर्मों से बहुत द्रव्य है। बाकी कर्मों का द्रव्य, स्थिति के अनुसार बंटवारा होता है।

प्रत्येक जीव की उदय में आ रही आयु की स्थिति के तृतीय भाग में आगामी आयु का बंध होता है। प्रथम तृतीय में नहीं तो आठ बार तृतीय भाग में बंध का अवसर मिलता है, यह मनुष्य तिर्यंच के लिए है। देव व नरक गति में छः माह शेष रहने पर आगामी आयु का बंध होता है। कर्म की 10 अवस्थायें होती हैं:-

1. बंध – आत्मा के साथ कर्म का एक क्षेत्रावागाह संबंध होना।
2. उदय – कर्मफल देना।
3. उत्कर्षण – कर्म की स्थिति अनुभाग बढ़ना।
4. अपकर्षण – कर्म की स्थिति अनुभाग घटना।
5. उदीरणा – कर्म को समय से पूर्व उदयावलि में लाना।
6. संक्रमण – कर्म की सजाति प्रकृति रूप बने होना।
7. सत्व – कर्म का कर्म रूप बने रहना।
8. उपशम – कर्म का उदय में न आना।
9. निधत्ति – कर्म का उदीरणा और संक्रमण न होना।

10. निकाचित – कर्म का उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण न होना।

उदय, सत्व, बंध, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण, उदीरणा, उपशम, निधत्ति, निकाचित। आयु को छोड़कर सातों कर्म की वर्गणायें किसी भी शुभ या अशुभ परिणाम से एक साथ आती हैं और उनका विभाजन पूर्व दर्शित विधि से होता है। इनमें जो पृथक्-पृथक् (मोक्ष शास्त्र अ. 6) कर्मों के आश्रव के कारण बताये हैं, उनमें उन विशिष्ट कारणों से स्थिति अनुभाग अधिक होता है।

अष्टकर्म के लक्षण :-

1. जो आत्मा के बाह्य पदार्थों को जानने की शक्ति के आवरण में निमित्त हो, वह ज्ञानावरण है। यह ज्ञान गुण को घातता है।

2. जो आत्मा की सामान्य प्रतिभास रूप शक्ति के आवरण में निमित्त हो व दर्शनावरण है। यह आत्मा के दर्श गुण को घातता है।

3. जो बाह्य आलंबन सहित सुख-दु:ख के वेदन में निमित्त हो, वह वेदनीय है। यह अव्याबाध गुण घातता है।

4. जो आत्मा के मोह (राग, द्वेष, मिथ्यात्व) के होने में निमित्त हो, वह मोहनीय है। यह सम्यक्त्व, चारित्र व सुख गुण को घातता है।

5. जो आत्मा के नारक आदि पर्याय में निमित्त हो वह आयु है। यह अवगाहन गुण को घातता है।

6. जो शरीरादि अवस्थाओं के धारण में निमित्त हो व नामकर्म है। यह सूक्षमत्व गुण को घातता है।

7. जो जीव के ऊँच-नीच भाव के होने में निमित्त हो, वह गोत्र है। यह अगुरुलघुत्वगुण को घातता है।

8. जो जीव के दानादि भाव न होने में निमित्त हो, वह अंतराय है। यह वीर्यगुण को घातता है।

भाव-विज्ञान दिसम्बर 2020 के अंक में भूल सुधार -

पृष्ठ – 9 उत्तर 763 पर – पृ. 137 की जगह पृ.167 करें।

पृष्ठ – 10 उत्तर 771 में – छह हजार धनुष की जगह छह हजार चार सौ धनुष लिखें।
उत्तर 772 में – ''ये ही सजीव'' की जगह ''ये ही जीव करें''।
प्रश्न 774 में – पर्याप्तियों की जगह पर्याप्तियों करें।

पृष्ठ – 12 उत्तर 782 पर पृ. 70 की जगह प्र.70 करें।

पृष्ठ – 15 उत्तर 794 में विद्युत कुमार बारह मुहूर्त्त की जगह विद्युत कुमार 12 दिन करें।

पृष्ठ – 17 पर 18 वीं पंक्ति में ''जो सत्य से लेकर... होते हैं'' तक का विषय निकाल दें क्योंकि नीचे वही विषय प्रस्तुत है।

पृष्ठ – 18 उत्तर 820 में पल्यङ्का आसन की जगह पल्यङ्कासन करें।

पृष्ठ – 19 पर प्रश्नोत्तर 826 रिपीट हो गया है अत: उसे अलग कर दें।

सदाचार सूक्ति काव्य- एक अनुपम रचना

-पं. सुखदेव जैन

सदाचार सूक्ति काव्य एवं आध्यात्मिक कविताएँ आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज की अनुपम रचना है। आ.श्री आर्जवसागरजी महाराज की साधना एवं उनका ज्ञान मेरी इन पंक्तियों में झलकता है।

स्व को स्व, पर को पर जाना।
निज में निज, निज में रमना जाना॥
जिनमें बहती भेद ज्ञान की धारा।
जिनकी अमृतमयी है प्रवचन धारा॥
ऐसे आर्जवसागर की है यह गाथा।
जिनके चरणों में झुकता हमारा माथा॥

सदाचार सूक्ति काव्य सचमुच एक अनूठी कृति है, इसको यह कहने में संकोच नहीं करेंगे कि आचार्यश्री ने आगम के सागर को गागर में भर दिया है। इन्होंने आगम की गहराई में डुबकी लगाई है और उसमें से नये-नये मोतियों को निकाला है, एक पुस्तक में पिरोया है। जिसका नाम ''सदाचार सूक्ति काव्य'' रखा है। कबीर ने भी कहा है कि-

जिन खोजा तिन पाईयाँ, गहरे पानी पैठ। मैं बपूरी डूबन डरी, रहे किनारे बैठ॥

जो जितना ज्यादा आगम के समुद्र का मंथन करेगा, वो ही उसमें से रत्न, मोती निकाल सकता है। आपने 631 पदों में शिक्षा-प्रद और आचरण परख विवेचन किया है, निश्चिय ही मानव मान को लुभायेगा और सदाचार संयम की डगर पर चलने को प्रेरित करेगा एवं अपना आत्मकल्याण भी करेगा। आचार्यश्री ने विभिन्न-विभिन्न काव्य दृश्यों में आध्यात्मिक से लेकर रोजमर्रा के प्रसंगों को चुना है जो कि जीवोपयोगी है। इन कुछ काव्य दृश्यों में से कुछ काव्य पदों का मैं संक्षिप्त में व्याख्या करूँगा।

आचार्यश्री ने **तपसाधना** दृश्य में- कितने सरल तरीके से मोक्ष मुक्ति का काव्य लिखा वह बहुत सराहनीय है-

दुग्ध से घृत पा, युक्ति रूप से।
तन से निज पा, मुक्ति रूप से॥

घी ही दूध का अन्तिम लक्ष्य है एक बार घी बनने के बाद फिर दूध नही बनेगा तथा दूध में भी नहीं मिलेगा, वह उसकी सतह पर ही तैरता रहेगा यह सब युक्ति रूप से दूध से घी बनाया जाता है। इसी प्रकार तन से जब हम तप करते हैं तब ही मुक्ति प्राप्त की जाती है बिना शरीर तपाये मुक्ति नहीं। जैसे दूध को तपाने के लिए तपेली तपाना जरूरी है तब ही दूध गरम होगा। आप चाहें कि बिना तपेली गरम किये दूध गरम हो जाये तो यह सम्भव नहीं है।

युक्ति का मतलब है कि दर्शन, ज्ञान, चारित्र ये भी सम्यक् हो तभी उसको बोधि की प्राप्ति होगी और मुक्ति की डगर पर चल सकता है। आचार्यश्री विद्यासागर ने भी अपने काव्य में लिखा है–

तन मिला है तुम तप करो, करो कर्म का नाश।
रवि शशि से भी अधिक है तुम में दिव्य प्रकाश॥

सद्गुरु दृश्य में–

गुरु; कुम्भकार- सम हैं होते।
शिष्य-मृत्तिका को गढ़ देते॥

कच्ची मिट्टी को कैसा ही रूप दिया जा सकता यहाँ यही बतलाया गया है कि गुरु कुशल हैं याने कुम्भकार है और शिष्य कुम्भ है उसको गुरु संस्कारित करता है तभी वह योग्य बनता है। आचार्य विद्यासागरजी ने भी मूकमाटी में लिखा है–

कुसाल चक्र यह / वह शान है। जिस पर चढ़कर अनुपम पहलुओं से निखर जाता है। आ. आर्जवसागरजी कहते हैं कि–

मोक्ष-पथ गुरु से, शुरु होता है।
बिन गुरु जीवन, शून्य होता है॥

गुरु की महिमा को मंडित किया है बिना गुरु के कुछ हाथ नहीं आने वाला है गुरु को आदर्श बनाना ही पड़ेगा। अरहंत भगवान ने सिद्ध भगवान के बारे में बताया तभी अरहंत भगवान का नाम पहिले लिया जाता है। कवि लोग कहते हैं–

गुरु गोविन्द दोउ खड़े काके लागू पाय।
बलिहारी गुरु की गोविन्द दियो बताय॥

गुरु की ही कृपा दृष्टि से जीवन बनता है अतः गुरु के बिना जीवन शून्य ही है। इसीलिये कहा जिनवाणी में–

गुरु की महिमा वरणी न जाय।
गुरु नाम जपो मन वचन काय॥

सद्गुरु दृश्य में–

शिला है शय्या, दिक् ही अम्बर।
हाथ है तकिया, पूज्य दिगम्बर॥

मुनियों की चर्या कैसी होती है यह उपरोक्त पद से भली भाँति समझा जा सकता है। मुनि तलवार की धार पर चलते हैं सिर्फ संयम और चारित्र की डोर थामकर वह संस्कार की वैतरणी तिरते हैं। यही हमारा भी चिन्तन है।

न अम्बर, न आडम्बर।
यथाजात दिगम्बर॥

मुनि की चर्या बहुत कठिन है गर्मी, सर्दी, वर्षात सब उनको एक समान रहते हैं। 22 परीषह सहते हैं तब मुनि चर्या का पालन होता है।

प्रकृति दृश्य में- ऊँच, नीच, बड़ा, छोटा, अभिमानी/ नम्र सब में भेद कर- समुद्र-कुआँ, वृक्ष की नम्रता आदि का बड़ी ही सरल भाषा में वर्णन किया है और उन छोटे-छोटे दृष्टांत से मानव मन को समझाया है। जैसे-

समुद्र, बड़ा, खारा होता।
लघु कुआँ, मीठा होता॥
गौरवं प्राप्यते दानात्, नतु वित्तस्य संचयात्।
स्थिति रुचे पयोदानां, पयोधीना मद्यः स्थिति॥

ये सब दान/ त्याग की विशेषता है जो त्याग करता है और नहीं करता है, उसमें अन्तर बताया है। त्याग वाला यश-कीर्ति पाता है, पुण्य का संचय करता है। दूसरे तरफ धन संचय ही करता है त्याग नहीं करता वह अधोगति पाता है। यही है कुआं से पानी निकलता तो मीठा और साफ पानी रहता है जबकि समुद्र संचय करता है तो उसका पानी खारा होता है। नम्र वृत्ति में गुणों का वास होता है। इसके सम्बन्ध में कहा है कि-

नम्र-वृत्ति जो रखते हैं।
लदे वृक्ष-सम रहते हैं।

और आगे आ.श्री उपकार के संबंध में कहते हैं कि-

नहीं वृक्ष बदला लेता।
पत्थर मारे फल देता॥

कबीर ने कहा- **बड़े हुए तो क्या हुए, जैसे पेड़ खजूर। पंथी को छाया नहीं, फल लागे अतिदूर॥**

नमन्ति फलितो वृक्षः, नमन्ति गुणिनो जनः।
शुष्क वृक्षाश्च मुर्खाश्च, न नमन्ति कदाचन॥

फलदार वृक्ष और गुणी जन नमते (झुकते) हैं। वृक्षों पर कोई पत्थर मारता है तो उसके बदले में वे फल देते हैं। कितनी सहृदयता है काश! मानव भी उनसे सीखें और नम्र वृत्ति अपनाकर अपना कल्याण करें यही आशय है आचार्यश्री का।

आहारौषध दृश्य-

जलगालन, दिन भोजन भाय।
व्यसन त्याग, वह जैनी कहाय॥

ये जैन की परिभाषा है जैन के 3 लक्षणों से पता चलता है कि वह जैनी है। छान कर पानी पीना, दिन में

भोजन करना और सप्त व्यसनों का त्यागी होना, वही जैनी कहलाने का अधिकारी होता है बाकी तो नाम के जैनी होते हैं। आगे निरोग रहने के लिये कहा है–

वात, पित्त, कफ, कुपित हो हार।
विवेक संतुलन, स्वास्थ सुधार॥

ये तीन सम्यक् हैं जैसे मोक्ष–मार्ग में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र। इसी प्रकार ये शरीर को निरोग करने के उपाय संतुलित सम्यक् वात, पित्त और कफ। अन्त में जैसे गाय दिन भर का खाना पचाने के लिये जुगाली करती है उसी प्रकार मुनि भी स्वाध्याय करते हैं जिससे आध्यात्मिक अध्ययन भूलते नहीं और आत्म–निष्ठ रहते हैं। विद्वत् गोष्ठी बगैरह भी एक प्रकार की जुगाली है जिससे ग्रन्थों का सतत् अभ्यास बना रहता है और आदमी आत्मा के निकट रहता है। और भी आचार्यश्री ने कहा–

चक्की दाना पिस जाता।
कील मिले, रक्षा पाता॥

संसार की चक्की में तो मानव पिस रहा है परन्तु जो धर्म की शरण में आ गया वह इस चक्की से बच गया और निकट भविष्य में वह संसारातीत हो सकता है। मोक्ष मार्ग क्या है? देह और आत्मा क्या है? इस विषय में आ.श्री लिखते हैं कि–

देह जुदी है, आत्म जुदा है।
नीर दूध-सम, मोह मुदा है॥

अब मोक्ष मार्ग के लिये बोधि की जरूरत है वह बोधि माने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इस त्रिबेड़ी में हम सब भ्रम छोड़ संसार समुद्र से तर सकते हैं। आचार्यश्री ने बोधि की महत्ता बतलाते हुए कहा है कि–

मोक्षमार्ग में, श्रद्धा जब जागे।
बोधि मिले तब, सब भ्रम भागे॥

इस प्रकार यह सदाचार सूक्ति काव्य एक अति ही उपयोगी कृति है और हम मानव के लिये यह लघुकाव्य महाकाव्य संजीवनी का काम करेगा जिससे मानव अपने उपयोग को स्थिर रख सकेगा और आत्म–कल्याण भी कर सकेगा। आचार्यश्री आर्जवसागरजी को बार–बार नमन करते हैं कि उन्होंने हम लोगों पर महती कृपा की है।

(रचना मेडीकल के पीछे, नेहानगर, मकरोनिया सागर (म.प्र))

मेरी दृष्टि में सदाचार सूक्ति काव्य

-इं. विमलकुमार जैन

परम पूज्य आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ का परम सानिध्य पूर्व पुण्य के उदय से हम सभी नेहानगर निवासियों को प्राप्त हुआ एवं दि. 4/3/2021 को पूज्य आचार्यश्री को मेरे निवास पर आहार देने का परम सौभाग्य मेरे परिवार को प्राप्त हुआ। पूज्यश्री का सानिध्य एवं मंगल आशीर्वाद के रूप में उक्त कृति प्राप्त हुई। पढ़कर मन आनंद से भर उठा।

बहुत पहले श्री ' तिरुवल्लवाचार्य ' कृत 'कुरल काव्य' पढ़ा था उसकी स्मृति हो आई वह कालजयी कृति है उसके बाद इस कृति को पढ़कर बहुत आनंद आया।

गुरुओं की महान कृपा रही है हम सभी संसारी प्राणियों पर इसलिए वे हम सभी को सुखी होने के उपदेश देते रहते हैं, वह तो स्वयं उस मार्ग पर चल ही रहे हैं लेकिन उनका भाव स्व-पर कल्याण का होता है। इस दृष्टि से भव्यों के मन में निज-कल्याण का भाव उत्पन्न होता है एवं उनके पुण्योदय से ऐसी रचनाओं का सृजन हो जाता है।

आ. भगवन् ने इसी भावना से इस कृति में गागर में सागर भर दिया है, कम से कम शब्दों में अपना सद्उपदेश दिया है। गृहस्थ जीवन में रहते हुये भी हम अपना वर्तमान एवं भविष्य कैसे सुखी बना सकते हैं? इस हेतु कुछ ''सीख'' सूक्तियों के माध्यम से दी है यदि हम उन्हें समझ-समझ कर पढ़ेंगे एवं अपने जीवन में उतारेंगे तो अवश्य ही लाभांवित होंगे क्योंकि किसी ने कहा है कि-

समझ समझकर, ''समझ'', समझना, एक बड़ी समझ है।
समझ समझकर, ''समझ'', न समझे, वो बड़ा न समझ है॥

आ.भगवन् ने अलग-अलग विषयों पर अपनी सूक्तियाँ दी हैं जो अति उत्तम हैं उनमें से कुछ इस प्रकार हैं। इसी प्रकार-

शिखर दिखे, तो करो प्रणाम। आलय बैठे, जिन-भगवान॥

सफर में रहते हुए या अन्य समय में यदि हमें जिन मंदिर की शिखर दूर से दिख जाए तो प्रणाम करते हुए उस मंदिरजी में विराजमान भगवान का स्मरण तो आना चाहिए और उन्हें प्रणाम करने से सहज की पुण्य बंध हो जाता है।

इसी प्रकारः-

निर्ग्रन्थ दर्श पद रज से काम-
बनते, पाते भवि शिवधाम॥
प्रभु- भक्ति भी खूब करें।
प्रभुवर-सम फिर रूप धरें ॥

4 ॥

आ. भगवन् श्री फल (नारियल) के माध्यम से उत्तम उदाहरण नर से नारायण (भगवान) बनने का देते हैं, कहते हैं–

श्रीफल, शिवफल दर्शाता।
धवल तैल- सम महकाता॥ 18॥

विशेष वर्णन पृष्ठ क्र. 45, 46 पर सूक्ति क्रमांक 45 से 57 तक बहुत ही सुन्दर तरीके से दिया है।

पुण्य का फल बताते हुये कहते हैं–

बुला बुलाकर, कोई न आते।
पुण्य रहे तो, स्वयं ही आते ॥28॥

संसारी प्राणी एवं साधु पर कहा–

कोई भोग के, पीछे भागें।
भोग किसी के, पीछे भागें ॥ 29॥

समता–ममता पर कितना सुन्दर कहा–

निज में रमना समता है।
पर में पड़ना ममता है ॥ 44॥

निश्चय व्यवहार को सरल शब्दों में–

जहाँ निश्चय वहाँ निवृत्ति है।
जहाँ व्यवहार वहाँ प्रवृत्ति है ॥ 47॥

विद्या प्राप्ति का सूत्र–

गुरु-विनय यह, हिय में धार।
विद्या आवे, सौख्य अपार ॥ 1॥

पं.श्री द्यानत राय जी ने भी दशलक्षण पूजन में यही बात कही है कि ''करि विनय बहु गुण बड़े जन की ज्ञान का पावे उदा'' आज के इस युग में जब लोग अपने तन को सजाने के लिए विभिन्न प्रकार के सौंदर्य प्रसाधनों का (जो जानवरों को मारकर बनाये गये हैं) का उपयोग करते हैं उनके बारे में कहते हैं–

नहीं सजाओ अपना रूप।
ना पाओगे वनिता रूप ॥ 29॥

किसी ने कहा है साधु का ''क्षण'' एवं अन्न का ''कण''बर्बाद मत करो उसके बारे में भगवन् ने कहा–

व्यर्थ फेंकते, दाना, पानी।
न दाना, फिर, भटके मानी ॥82॥

साधु संगति ऐसी होती है जैसे कुए से जल जितना चाहो निर्मल जल मिलेगा रात हो या दिन उसी प्रकार साधु होते हैं–

स्वल्प, अधिक लो, निशदिन जल।
कूप-समा, साधु निर्मल ॥ 9॥

हमारे गृहस्थ-जीवन में हमारे परिवार को प्रायः प्रतिदिन औषधियों की आवश्यकता पड़ती है जो वस्तुयें हमारी रसोई में मिल जावेंगी उन्हीं के बारे में सुन्दर वर्णन है-

बिना न उबला, भोज्य कभी हो।
फिर बीमारी, कभी नहीं हो ॥ 10॥

योग ध्यान की रोचक चर्चा पृष्ठ क्र. 90, 91 पर उत्तम रीती से की है।

कहाँ तक कहें कितना कहें जो इस कृति को पढ़े उसे ही आनंद आयेगा। अंत में अंतिम लक्ष्य पर आते हैं-

जिन-सम तुम भी, ध्यान करो,
मुनि बन, भव को पार करो।
जिसका जीवन जिन-मय को,
जिनेन्द्र बन, शिव पाय अहो!

सुधी जन इस कृति को पढ़कर अपना वर्तमान एवं भविष्य सुधारें एवं परंपरा से शिवसुख प्राप्त करें, इसी भावना के साथ भगवन् श्री आचार्यश्री आर्जवसागरसागरजी के चरणों में बारंबार नमोस्तु करते हुये ईश्वर से प्रार्थना है कि वे स्वस्थ रहते हुये अपने रत्नत्रयों का पालन करते हुये स्वपर कल्याण की इसी भावना के साथ हम सब का भी कल्याण करें एवं एक दिन सिद्ध अवस्था को प्राप्त हों इसी मंगल कामना के साथ।

नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु

[नेहानगर, मकरोनिया, सागर (म.प्र)]

आध्यात्मिक ध्यान से कर्मों की निर्जरा होती है।

रचयिता : आचार्यश्री आर्जवसागर

धर्म ध्यान का बड़ा महत्त्व है। ध्यान का दूसरा नाम एकाग्रता है। ध्यान का सम्बन्ध आत्मा से है। ध्यान तो विश्व में सभी के होता है, किन्तु आध्यात्मिक ध्यान तो ज्ञानी साधु-सन्तों के होता है। आध्यात्मिक ध्यान से कर्मों की निर्जरा होती है, यह वीतरागता की ओर ले जाता है। कर्मों की निर्जरा से आत्मा को मोक्ष मिलता है। एक होता है व्यावहारिक ध्यान जो जीवों पर दया व करुणा की ओर ले जाता है। यह प्रशस्त राग ध्यान में आता है जो पुण्य बंध का कारण है। ऐसा आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ने अपने प्रवचन में बताया। आचार्यश्री ने ध्यान के दो प्रकार बताये क्रियात्मक व निष्क्रियात्मक। यह निष्क्रियात्मक ध्यान अपनी काया व वचन व्यापार को रोकते हुये आत्मा पर मन स्थिर रखकर करना चाहिए। यह ध्यान साधुओं के होता है यह सम्पूर्ण निश्चय की ओर ले जाता है।

आचार्यश्री ने यह भी बताया कि ध्यान मात्र एक्शन से नहीं इन्टेशन से होता है। अतः द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से ध्यान होता है। भाव आत्मा को परमात्मा से जोड़ने के लिए होना चाहिए। काल प्रातः मध्याह्न और सायं का होना चाहिए। क्षेत्र शुद्ध, प्रशस्त और एकान्त होनी चाहिए। तथा द्रव्य रूप अपना शरीर पद्मासन, खड्गासन वज्रासन के रूप में सौम्य-मुद्रा के साथ हो और अपना आहार भी शुद्ध होना चाहिए ऐसे उत्कृष्ट अभिप्राय से ही ध्यान की सिद्धि सरलता से हो सकेगी।

साभार-आर्जव-वाणी

राहतगढ़ नगर में लोक कल्याण विधान से हुई 2021 की शुरुआत

राहतगढ़ नगर में 9 जनवरी से 14 जनवरी तक आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ के मंगल सान्निध्य में श्रीमज्जिनेन्द्र लोक-कल्याण महामण्डल विधान का आयोजन किया गया। जिसमें नित्यमह अभिषेक शांतिधारा उपरांत पूजन एवं षोडशकारण भावनाओं के अर्घ्य समर्पित किये गये। प्रतिदिन सायंकाल महाआरती का भी भव्य आयोजन किया गया एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम भी संपन्न किये गये। इस विधान के आयोजन में अनेक लोगों ने षोडशकारण व्रत के 16 वर्ष पूर्ण होने पर व्रतोद्यापन भी किया। अंतिम दिन आचार्यश्री ससंघ समवसरण में विराजमान हुये। आचार्यश्री की मंगलमयी देशना सुनने का लाभ भी लोगों को प्राप्त हुआ। समवशरण में विराजमान आचार्यश्री ससंघ को देखकर ऐसा लग रहा था मानो साक्षात् तीर्थंकर भगवान का समवशरण ही लगा हो और समवशरण में तीर्थंकर की दिव्यध्वनि स्वरूप गुरुवर की वाणी खिर रही हो। पश्चात् भव्य शोभायात्रा भी निकाली गई। राहतगढ़ नगर में यह शोभायात्रा एक अद्वितीय शोभायात्रा ही थी। आचार्यश्री ने अपनी मंगल देशना में अहिंसा का संदेश दिया। अनेक लोगों ने कई नियम भी ग्रहण किये। फुटेरा, दमोह, सागर, ललितपुर से आये हुये अतिथि भी इस शोभायात्रा का हिस्सा बने।

पश्चात् दिनांक 17 जनवरी 2021 को आचार्यश्री ससंघ का मंगल विहार मसुरयाई, करहद होते हुये जैसीनगर की ओर हुआ।

19 जनवरी 2021 को आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ की भव्य मंगलमय अगवानी जैसीनगर में हुई। जैसीनगर में गुरुवर के आगमन से लोगों को कई महीनों के बाद गुरुवाणी, गुरु सान्निध्य का लाभ मिला। समाज के लोगों एवं पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन कमेटी के लोगों ने आचार्यश्री से निवेदन किया कि हे गुरुदेव! आपके शीतकाल का कुछ दिन का प्रवास हमारे नगर में होना चाहिए। हम सबकी अभिलाषा है कि आपकी वाणी; आपके सान्निध्य का लाभ हम लोगों को प्राप्त हो।

जैसीनगर में मनाया गया आचार्यश्री का 7 वां आचार्य पदारोहण दिवस

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के 7 वें आचार्य पदारोहण दिवस मनाने का सौभाग्य जैसीनगर वासियों को प्राप्त हुआ। 25 जनवरी 2021 को प्रातः काल की बेला में कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत मंगलाचरण पूर्वक की गई। पश्चात् दमोह, सागर, भोपाल, राहगतगढ़, ललितपुर, दिल्ली आदि अनेक स्थानों से आये हुये अतिथियों का सम्मान किया गया। पश्चात् अतिथियों के द्वारा चित्र अनावरण, दीप प्रज्जवलन किया गया। संघस्थ साधुओं द्वारा आचार्यश्री की परिक्रमा लगाई गई। उपरांत गुरुवर के पाद-प्रक्षालन करने का सौभाग्य श्रेष्ठी श्री लोकेश जी जैन, सपरिवार दिल्ली वालों को प्राप्त हुआ। गुरुवर के कर-कमलों में प्रथम शास्त्र दान करने का सौभाग्य श्रीमान् राजेश जी जैन, 'आर्जव छाया' सपरिवार दमोह वालों को प्राप्त हुआ। पश्चात् गुरुवर की संगीतमय पूजन की गई। तत्पश्चात् गुरुवर की मंगलमयी देशना प्रारंभ हुई जिसमें गुरुवर ने गुरु उपकार के कुछ संस्मरण एवं नारियल में मोक्षमार्ग की शिक्षा के बारे में बताया।

इसी बीच मुनिश्री विलोकसागर जी एवं मुनिश्री विबोधसागर जी महाराज की प्रेरणा से सुभाष नगर,

सागर से कमेटी में आये सभी सदस्यों ने गुरुवर ससंघ के समक्ष श्रीफल भेंट कर निवेदन किया किया कि हे गुरुदेव! हम सागरवासियों को 30 जनवरी से प्रारंभ होने वाले सिद्धचक्र महामंडल विधान में आपके ससंघ का सान्निध्य प्राप्त हो।

दिनांक 20 जनवरी से 2 फरवरी तक का प्रवास जैसीनगर वासियों को प्राप्त हुआ। प्रतिदिन प्रातःकाल गुरुवर की मंगलमयी देशना सुनने का लाभ भी प्राप्त हुआ। दोपहर में संघस्थ साधुओं द्वारा तीर्थोदयकाव्य, भावना द्वात्रिंशतिका (अर्थ सहित) की कक्षाएँ भी संपन्न हुईं एवं प्रतिदिन आचार्यश्री के मुखारविंद से सायंकाल पाठशाला के बच्चों को कविताओं का ज्ञान भी प्राप्त हुआ एवं सदाचार सूक्ति-काव्य की वाचना भी की गई। इसी प्रवास के दौरान 31 जनवरी से 2 फरवरी तक त्रिदिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया गया; जिसमें प्रथम दिन पाठशाला कार्यक्रम किया गया एवं कलश स्थापना की गई। उपरांत छोटे-छोटे बच्चों द्वारा धार्मिक प्रस्तुति भी दी गई। द्वि दिवसीय सम्मेदशिखर महामण्डल विधान का आयोजन किया गया; जिसमें प्रातःकाल 7 बजे से अभिषेक उपरांत गुरु के मुखारविंद से शांतिधारा की गई पश्चात् गुरुवर का पाद प्रक्षालन, शास्त्र भेंट किये गये। अंतिम तृतीय दिवस मानस्तंभ के महामस्तकाभिषेक के कार्यक्रम की शुरुआत की गई; जिसमें सर्वप्रथम प्रमुख पात्रों का चयन किया गया पश्चात् गुरुवर की पूजन बड़े ही भक्ति भाव पूर्वक संपन्न की गई। तद्उपरांत महामस्तकाभिषेक का कार्यक्रम संपन्न हुआ एवं बाहर से आये हुये अतिथियों का सम्मान भी कमेटी जनों द्वारा किया गया।

दिनांक 2 फरवरी 2021 को गुरुवर ससंघ के मंगल विहार की खबर सुनकर समस्त जैसीनगर समाज गुरुवर के समक्ष पहुँचकर निवेदन करने लगी कि हे गुरुवर! हमे तो आपके चातुर्मास का सौभाग्य प्राप्त करना है ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि आपके ससंघ का मंगल चातुर्मास हम जैसीनगर वासियों को प्राप्त हो। गुरुवर ने कहा- देखेंगे.... पश्चात् दोपहर 4:00 बजे गुरुवर ससंघ का विहार पडरिया, सरखडी, सुरखी, रतौना होते हुये सागर की ओर हुआ।

धर्मनगरी सागर नगर में मुनिद्वय का गुरुदेव से हुआ भव्य महामिलन

रतौना गौशाला होते हुये दिनाँक 4 फरवरी 2021 को सागर नगर में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के परम शिष्य मुनिश्री विलोकसागरजी एवं मुनिश्री विबोधसागरजी महाराज द्वारा भव्य मंगल अगवानी की गई। गुरु-शिष्य मिलन का अद्भुत नजारा देखने को मिला। शास्त्री नगर, सागर जैन समाज एवं श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान कमेटी के सभी सदस्य आचार्य ससंघ की मंगल अगवानी हेतु गाजों-बाजों के साथ, चक्रवर्ती सेना के साथ, महिला मण्डल, बालिका मण्डल एवं सभी युवा मण्डल करीब 2 कि.मी. तक मुनिद्वय के साथ गुरुवर को लेने पहुँचे। मुनिद्वय ने आचार्यश्री की प्रदक्षिणा लगाई एवं पाद प्रक्षालन भी किया गया। पश्चात् आचार्यश्री ससंघ अपने सभी रत्नों (शिष्य रूपी रत्न) के साथ समवशरण में विराजमान हुये। गुरुवर, समवशरण में शिष्यों के मध्य ऐसे शोभायमान हो रहे थे जैसे साक्षात् महावीर भगवान ही समवशरण में विराजमान हों। आचार्यश्री की मंगलमयी देशना सुनने का लाभ लोगों को प्राप्त हुआ। करीब 4-5 दिन का

सान्निध्य शास्त्री वार्ड वालों को प्राप्त हुआ। इसी बीच राहतगढ़, दमोह, ललितपुर, मुडेरी, बलेह से भी भक्तगण पधारे। बलेह नगर समाज ने गुरु के समक्ष श्रीफल भेंट कर गुरु दर्शनार्थ पञ्चकल्याणक हेतु निवेदन किया।

पश्चात् दिनांक 8 फरवरी को विधान के अंतिम दिन इन्द्र-इन्द्राणियों द्वारा हवन की क्रियाएँ संपन्न की गई। तदुपरांत गुरुवर ससंघ मंचासीन हुये। आचार्यश्री के पाद प्रक्षालन करने का सौभाग्य ललितपुर से पधारे श्रेष्ठी श्री अभिनव जैन प्रीति जैन को प्राप्त हुआ। वर्णी कॉलोनी, अंकुर कॉलोनी, नेहानगर, गोपालगंज आदि अन्य-अन्य उपनगरों से पधारे लोगों ने गुरुवर से निवेदन किया कि हे गुरुदेव! हम सबको भी आपका कुछ दिन का सान्निध्य प्राप्त हो; आप आशीर्वाद दीजिए। पश्चात् श्रीजी की भव्य रथयात्रा निकाली गई। तदुपरांत आचार्यश्री के मुखारबिंद से शांतिधारा संपन्न की गई। इसके बाद समस्त जनसमूह को आचार्यश्री की मंगलमयी देशना सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। तदुपरांत करीब 3 बजे आचार्यश्री ससंघ का मंगल विहार वर्णी कॉलोनी की ओर हो गया। ससंघ की मंगल अगवानी हेतु सागर नगर के विधायक माननीय शैलेन्द्रजी जैन, श्रेष्ठी श्री मुकेशजी जैन ढाना एवं अन्य श्रावक भी आये। आचार्यश्री की भव्य मंगल अगवानी वर्णी कॉलोनी में हुई। आदिनाथ निर्वाण लाडू महोत्सव के लिये गुरुवर समक्ष निवेदन किया गया।

दिनांक 10 फरवरी 2021 को आदिनाथ मोक्ष कल्याणक महोत्सव का आयोजन किया गया; जिसमें प्रातःकाल श्रीजी का अभिषेक, शांतिधारा की गई। तत्पश्चात् गुरुवर की संगीतमय पूजन बड़े ही भक्तिभाव पूर्वक की गई। आयोजन में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे विधायक शैलेन्द्र जी ने गुरुवर की पूजन कर आशीर्वाद भी प्राप्त किया। उपरांत आचार्यश्री की अमृतमयी वाणी सुनने का अवसर भी प्राप्त हुआ। पश्चात् निर्वाण लाडु चढ़ाया गया। 12 फरवरी रविवार को पाठशाला के बच्चों द्वारा संगीतमय पूजन का आयोजन किया गया। इसी बीच गंजबासौदा से मुनिश्री महानसागरजी, मुनिश्री विदितसागरजी महाराज की प्रेरणा से पधारी कमेटी ने गुरुदेव से मंगल आशीर्वाद ग्रहण किया एवं अंकुर कॉलोनी से पधारे कमेटीजनों ने 14 से 21 फरवरी तक आयोजित सिद्धचक्र विधान में गुरुवर सान्निध्य प्राप्त हो; ऐसी भावना व्यक्त की। 14 फरवरी को दोपहर 2:30 बजे गुरुवर ससंघ का मंगल विहार वर्णी कॉलोनी से अंकुर कॉलोनी सागर की ओर हो गया।

अंकुर कॉलोनी में सिद्धचक्र विधान में प्राप्त हुआ...
आचार्यश्री ससंघ का मंगल सान्निध्य

14 फरवरी को सभी इन्द्र-इन्द्राणियों द्वारा आचार्य ससंघ की भव्य मंगलमयी अगवानी की गई। सभी ने अपने द्वारों पर रांगोली सजाई एवं आचार्यश्री का पाद प्रक्षालन कर आरती उतारी। मंदिर के द्वार पर महिला मण्डल द्वारा गुरुवर का पाद-प्रक्षालन किया गया। पश्चात् मंगलाचरण उपरांत गुरुवाणी सुनने का लाभ प्राप्त हुआ। प्रतिदिन सायंकाल भक्ति उपरांत सदाचार सूक्ति काव्य, जीवन संस्कार भी गुरुमुख से सुनने को मिली। 17 फरवरी 2021 को तिथि अनुसार गुरुदेव के 7 वें आचार्य पदारोहण दिवस को मनाने का अनमोल अवसर भी अंकुर कॉलोनी समाज को प्राप्त हुआ। इस अवसर पर गुरुदेव की संगीतमय मांगलिक पूजन की गई। तदुपरांत

गुरुवर के पाद प्रक्षालन का सौभाग्य मुनिश्री सुधासागरजी महाराज के गृहस्थ जीवन के भाई ऋषभ जैन सपरिवार को प्राप्त हुआ एवं गुरुवर के करकमलों में सौधर्म इन्द्र परिवार द्वारा शास्त्र दान दिया गया। कार्यक्रम में वर्णी कालोनी, नेहानगर, जैसीनगर, राहतगढ़ आदि अन्य स्थान से भी भक्तगण पधारे। 21 फरवरी को विधान के अंतिम दिन हवन उपरांत गुरु सान्निध्य में नगर फेरी भी निकाली गई। कार्यक्रम में सहजपुर (जबलपुर) से आई कमेटी ने गुरु चरणों में श्रीफल भेंट कर अष्टाह्निका पर्व में सिद्धचक्र महामंडल विधान हेतु निवेदन किया। सायं काल 25 फरवरी को गुरुवर ससंघ का मंगल विहार नेहानगर की ओर हुआ और जहाँ मंगल वाद्यों के साथ गुरुवर की मंगल अगवानी हुई।

नेहानगर, सागर में प्रभावना

नेहानगर वासियों को प्रतिदिन प्रातःकाल प्रवचन एवं सायंकाल भक्ति उपरांत पाठशाला शंका समाधान एवं प्रश्नमंच का लाभ भी प्राप्त हुआ। दिनांक 1 मार्च 2021 को प्रातः कालीन त्रय मुनिराजों का गुरुदेव से महा मंगल मिलन हुआ। मुनिश्री महानसागरजी, मुनिश्री विशोधसागरजी एवं मुनिश्री विदित सागरजी की नेहानगर में भव्य मंगल अगवानी की गई। उपरांत गुरु-शिष्य के मिलन का अनुपम दृश्य देखने को मिला। सभी मुनिराजों ने आचार्यश्री की परिक्रमा लगाई, उपरांत गुरुवर से रत्नत्रय की कुशलता पूछी।

दिनांक 5 मार्च 2021 को भगवान सुपार्श्वनाथ एवं चंद्रप्रभु का मोक्ष कल्याणक दिवस मनाने का सौभाग्य; आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज ससंघ के मंगल सान्निध्य में नेहानगर सकल दि. जैन समाज वासियों को प्राप्त हुआ। प्रातः 6 बजे से अभिषेक उपरांत गुरु मुख से शांतिधारा संपन्न हुई। पश्चात् निर्वाण लाडू समर्पण किया गया एवं श्री सम्मेदशिखर महामण्डल विधान का भी आयोजन किया गया।

इसके उपरांत आचार्यश्री की मंगलमयी वाणी सुनने का अवसर भी प्राप्त हुआ। इसी बीच दीनदयाल नगर, सागर से पधारी कमेटी ने गुरु समक्ष श्रीफल भेंट कर आग्रह किया कि हे गुरुदेव! हम भी गुरुवाणी का लाभ लेना चाहते हैं, यह हम सभी को भी आपके ससंघ सान्निध्य का लाभ मिले; यह हम सभी की भावना है। आचार्यश्री के प्रवचन उपरांत नेहानगर सकल दि. जैन समाज ने गुरुवर से अष्टाह्निका महापर्व में श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान हेतु निवेदन किया।

ऋद्धि मंत्रों के उच्चारण पूर्वक हर्षोल्लास से मनाया गया अष्टाह्निका पर्व

दिनांक 21 मार्च 2021 से नेहानगर, सागर(म.प्र) में आचार्य गुरुदेवश्री आर्जवसागर जी महाराज के मंगल सान्निध्य में एवं बा.ब्र. अनिल भैया बंडा के निर्देशन में अष्टाह्निका पर्व में श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन बड़े ही हर्षोल्लास पूर्वक किया गया। जिसमें घटयात्रा उपरांत ध्वजारोहण पूर्वक कार्यक्रम की शुरुआत हुई। विशाल पाण्डाल में श्री जी के अभिषेक उपरांत आचार्यश्री के मुखारविंद से मंत्रोच्चारण पूर्वक शांतिधारा संपन्न हुई और इन्द्र प्रतिष्ठा का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। तदुपरांत आचार्यश्री की मंगलमयी वाणी सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। पश्चात् विधान के अर्घ्य समर्पित किये गये। करीब 8 दिनों तक भक्तों ने भगवान की पूजा अर्चना बड़े ही हर्षोल्लास पूर्वक की। विधान के अर्घ्य हेतु बण्डा, सानौधा और शांतिनगर, किष्किंधा

नगर, आदि अनेक जगह से सजी हुई द्रव्य आयी और सभी लोगों ने आचार्यश्री से ग्रीष्मकालीन वाचना हेतु निवेदन किया। विधान के अंतिम दिन दिनाँक 29 मार्च 2021 को सभी मुख्य पात्रों का, व्रतीगणों का एवं अन्य बाहर से आये हुये अतिथियों का सम्मान समारोह किया गया। पश्चात् हवन में आहूतियाँ दी गई। उपरांत श्री जी की शोभायात्रा निकाली गई। कार्यक्रम में दमोह, सानौधा से आये हुए सभी लोगों ने आचार्यश्री से ग्रीष्मकालीन वाचना हेतु निवेदन किया। पश्चात् 29 मार्च को आचार्यश्री ससंघ का मंगल विहार दीनदयाल नगर की ओर हुआ।

चेतन रत्नों की खान 'सागर' नगरी से हुआ गुरुवर ससंघ का विहार

30 मार्च 2021 को आचार्य गुरुदेवश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ससंघ का मंगल विहार सागर से चनाटोरिया, सानौधा, परसोरिया, भैंसवाहा होते हुये आपचंद की ओर हुआ। अ.क्षे. आपचंद में रंगपंञ्चमी के शुभअवसर पर प्रतिवर्षानुसार धार्मिक मेले का आयोजन किया गया; जिसमें आचार्यश्री ससंघ का मंगल सान्निध्य प्राप्त हुआ। कार्यक्रम में अभिषेक, शांतिधारा उपरांत श्री शांतिनाथ मण्डल विधान का आयोजन किया गया पश्चात् मुख्य पात्रों का चयन किया गया। दोपहर में रथयात्रा पूर्वक विमानोत्सव का आयोजन भी हुआ। उपरांत श्रीजी की गुरुमुख से मंत्रोच्चारण पूर्वक शांतिधारा संपन्न हुई। इसके उपरांत सानौधा, दमोह, नेहानगर सागर आदि अनेक महानगरों से पधारी कमेटियों द्वारा आचार्यश्री समक्ष श्रीफल भेंटकर ग्रीष्मकालीन वाचना हेतु निवेदन किया गया।

दिनांक 2 अप्रैल 2021 को करीब 4 बजे गुरुवर ससंघ का मंगल विहार वरपानी होते हुए गढ़ाकोटा की ओर हुआ। श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर (बस स्टैण्ड रोड) में आचार्यश्री ससंघ की भव्य मंगल अगवानी की गई। पश्चात् गुरुवर से आदिनाथ जन्म जयंती के लिये निवेदन किया गया। 5 अप्रैल 2021 को मंदिर प्रांगण में हर्षोल्लास पूर्वक आदिनाथ जयंती मनाई गई। प्राचीन पार्श्वनाथ भ. के दर्शन हेतु आचार्य ससंघ पटेरिया जी दर्शनार्थ भी पधारे।

2-3 दिन प्रवास उपरांत ससंघ का मंगल विहार चनौआ, बाँसा होते हुये दमोह की ओर हुआ।

आचार्यश्री ससंघ का हुआ दमोह नगर आगमन

7 अप्रैल 2021 को सायंकालीन आचार्यश्री ससंघ का मंगल प्रवास माननीय श्रीमती सुधा-जयंतकुमार मलैया जी के कॉलेज में हुआ। पश्चात् गुरुभक्ति उपरांत मलैया परिवार द्वारा आचार्यश्री की आरती की गई। 8 अप्रैल 2021 को प्रात:काल सागर नाका मंदिर में आचार्यश्री ससंघ की मंगल अगवानी की गई। पश्चात् आचार्यश्री के पाद प्रक्षालन, शास्त्र दान उपरांत गुरुवर के मंगल प्रवचन संपन्न हुये। पश्चात् आहारचर्या संपन्न हुई; जिसमें आचार्यश्री के पड़गाहन का सौभाग्य 'आर्जव छाया परिवार' को प्राप्त हुआ। तदुपरांत सायंकाल आचार्य ससंघ का मंगल विहार सिविल वार्ड की ओर हुआ।

सिविल वार्ड, दमोह में आचार्यश्री ससंघ की भव्य मंगल अगवानी की गई जिसमें घरों के द्वारों पर रांगोली सजाई गई एवं जगह-जगह आचार्यश्री का पाद प्रक्षालन कर आरती उतारी गई। गुरुवर ससंघ की मंगल अगवानी में जैन पंचायत के अध्यक्ष सुधीर जी सिंघई आदि अन्य सभी कमेटी जन भी उपस्थित रहे एवं

कुण्डलपुर कमेटी के अध्यक्ष श्रीमान् संतोष कुमार सिंघई ने आचार्यश्री से श्रीफल भेंट कर कुण्डलपुर पधारने हेतु निवेदन किया। 5-6 दिन के प्रवास के दौरान आचार्यश्री के दर्शनार्थ गंजबासौदा विधायक श्रीमती लीना जैन, तथा गुरुवर के विहार के दौरान केन्द्रीय मंत्री दमोह सांसद प्रह्लाद सींग पटैल, माननीय प्रद्युम्न सिंह लोधी, भारतीय जनता पार्टी संगठन मंत्री श्री सुभाष भगत जी आदि लोग भी पधारे एवं आचार्यश्री का मंगल विहार जबलपुर नाका मंदिर की ओर हुआ; कमेटी जनों द्वारा आचार्यश्री से ग्रीष्मकालीन वाचना हेतु श्रीफल भेंट कर निवेदन किया। 3-4 दिन जबलपुर नाका प्रवासोपरांत 16 अप्रैल को गुरुवर का मंगल विहार हथनी, राजापटना होते हुये लकलका की ओर हुआ। लकलका ग्राम में आचार्य संघ की भव्य अगवानी की गई।

लकलका का डबल लकः एक महावीर जयंती दूसरा दीक्षा दिवस

लकलका, दमोह (म.प्र.) में बड़े ही हर्षोल्लास पूर्वक भ. महावीर का 2620 वां जन्मोत्सव एवं आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज का 34 वां मुनिदीक्षा दिवस मनाया गया। जिसमें सर्वप्रथम प्रातःकाल जिनाभिषेक उपरांत गुरु मुख से शांतिधारा संपन्न की गई। पश्चात् भ.महावीर स्वामी की भक्ति भाव पूर्वक संगीतमय पूजन की गई। उपरांत आचार्यश्री द्वारा भ.महावीर पर मंगलमयी देशना सुनने का अवसर मिला। दोपहर में दीक्षा दिवस के काय्रक्रम के दौरान सर्वप्रथम पाठशाला के बच्चों द्वारा सुंदर मंगलाचरण किया गया। पश्चात् बाहर से पधारे भक्तगणों के द्वारा चित्र अनावरण एवं दीप प्रज्जवलन किया गया। गुरुवर का पाद प्रक्षालन करने का सौभाग्य लकलका वासियों को प्राप्त हुआ एवं शास्त्र दान करने का सौभाग्य श्रेष्ठी श्रीमान् विनोद कुमार जैन बाकलीबाल अजमेर (राज.) वालों को प्राप्त हुआ। इसके उपरांत आचार्य गुरुदेव की अष्टद्रव्य से संगीतमय पूजन संपन्न की गई।

मुनिश्री महत्सागर जी महाराज ने भी अपने 5 वें मुनि दीक्षा दिवस पर गुरु उपकार को व्यक्त किया पश्चात् लकलका वासियों को गुरु मुख से उनके मुनिदीक्षा के संस्मरण सुनने का अवसर भी प्राप्त हुआ। सायंकाल गुरुभक्ति उपरांत गुरुदेव की मंगलमयी आरती की गई पश्चात् शंका समाधान एवं भगवान महावीर पर प्रश्नमंच एवं उनके भजनों का आयोजन भी किया गया।

प्रतिदिन प्रातःकाल गुरुदेव के मांगलिक प्रवचन, दोपहर में संघस्थ कक्षा एवं सायंकाल गुरुभक्ति, प्रश्नमंच, शंका समाधान का लाभ भी लकलका वासियों को प्राप्त हुआ।

गुरुवर की प्रेरणा से संपन्न हुई आध्यात्मिक ऑनलाइन मंगलाचरण प्रतियोगिता

आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज ससंघ की पावन प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद से प्रतियोगिता का आयोजन किया गया; जिसका परिणाम महावीर जयंती एवं गुरुवर के दीक्षा दिवस के दिन 25 अप्रैल 2021 को घोषित किया गया। प्रतियोगिता में करीब 50-60 लोगों ने अपनी कला दिखाई। इस प्रतियोगिता को दो वर्गों में बाँटा गया था; जिसमें प्रथम वर्ग में 0-15 वर्ष तक की आयु में प्रथम स्थान भैया प्रशम जैन दमोह(म.प्र.), द्वितीय स्थान बहिन आशिका जैन जबलपुर (म.प्र.), तृतीय स्थान भैया आदि जैन ललितपुर (उ.प्र.) ने प्राप्त किया। द्वितीय वर्ग में 15 वर्ष से ऊपर की आयु में प्रथम स्थान श्रीमती अंकिता जैन मेरठ (उ.प्र.), द्वितीय स्थान प्रतीक्षा जैन, सागर (म.प्र.) एवं तृतीय स्थान पूनम जैन ललितपुर (उ.प्र.) ने प्राप्त किया। पुरस्कार पुण्यार्जन

का सौभाग्य श्रीमती विमला देवी सुपुत्र श्रीमान् नरेश-रीता जैन अजमेर (राज.) वालों को प्राप्त हुआ। प्रतियोगिता में मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आदि अनेक प्रांतों के लोगों ने अपनी गायन कला का प्रदर्शन किया।

लकलका में कुछ दिन प्रवास के उपरांत आचार्यश्री ससंघ मंगल विहार झापन गाँव होते हुये झलौंन की ओर हुआ। झलौंन वासियों ने आचार्यश्री ससंघ से करीब 20-25 दिन अनेक कक्षाओं के माध्यम से एवं शंका समाधान, प्रश्नमंच के माध्यम से ज्ञान प्राप्त किया। पश्चात् दिनांक 23 मई 2021 को गुरुवर ससंघ का विहार तेंदूखेड़ा की ओर हुआ। तेंदूखेड़ा नगर में भव्य मंगल अगवानी की गई। जगह जगह द्वारों पर रांगोली सजाई गई, गुरुवर का पाद प्रक्षालन कर आरती उतारी श्री शांतिनाथ मंदिर विद्यानगर तेंदूखेड़ा के कमेटी जनों ने आचार्य ससंघ से मंगल चातुर्मास हेतु निवेदन किया कि हे गुरुदेव! आपकी ससंघ सन्निधि हम तेंदूखेड़ा वासियों को प्राप्त हो। लखनादौन, शिवनगर (जबलपुर) व छपरा से पधारे कमेटी के लोगों ने भी पधारने हेतु श्रीफल अर्पित किये। करीब 12-13 दिन तक तेंदूखेड़ा नगर में धर्म प्रभावना हुई पश्चात् दिनाँक 6 जून 2021 को आचार्य ससंघ का मंगल विहार अतिशय क्षेत्र कोनीजी की ओर हुआ।

अतिशय क्षेत्र कोनी जी में हुई आचार्य ससंघ की अगवानी

दिनांक 7 जून 2021 को प्रात:काल में आचार्य गुरुदेव ससंघ की मंगल अगवानी हुई। आचार्यश्री ससंघ ने क्षेत्र की वंदना की एवं झलौन, तेंदूखेड़ा, पाटन, दमोह आदि नगरों से पधारे भक्त गणों की भी गुरुवर ससंघ की अगवानी करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ वंदना के उपरांत आचार्यश्री ने प्रवचन के दौरान कई संस्मरण भी सुनाये। जब वे गुरुवर विद्यासागर जी महाराज के साथ सन् 1985, 89 और 90 में कोनीजी पधारे थे। इस तरह एक दिन के प्रवास उपरांत आचार्यश्री की मंगल विहार पाटन होते हुए शहपुरा भिटौनी की ओर हुआ। 9 जून 2021 की प्रात: कालीन बेला में आचार्य श्रीआर्जवसागरजी ससंघ की मंगल अगवानी पंचायती मंदिर, शहपुरा में हुई।

शहपुरा में मनाया गया श्रुत पंचमी महापर्व-

शहपुरा के पंचायती मंदिर वासियों को गुरु ससंघ के मंगल सान्निध्य में श्रुतपंचमी महापर्व मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

इस अवसर पर प्रात:काल गुरुमुख से शांतिधारा उपरांत श्रुतपंचमी हेतु श्रुतस्कंध महामण्डल विधान का आयोजन किया गया पश्चात् सभी बाहर से आये अतिथियों द्वारा चित्र अनावरण एवं द्वीप प्रज्जवलन किया गया एवं लखनादौन, शिवनगर (जबलपुर) व जबेरा आदि नगरों से पधारी कमेटियों के सदस्यों ने गुरुदेव के समक्ष श्रीफल भेंट कर गुरुदेव से निवेदन किया हे गुरुवर। आपका मंगल चातुर्मास हमारे नगर में हो; जिससे हमें भी धर्म लाभ प्राप्त हो सके। उपरांत शहपुरा पंचायती मंदिर की कमेटीजनों एवं अनेक श्रद्धालुओं द्वारा गुरुवर ससंघ को शास्त्र भेंट किये गये और महिलामण्डल द्वारा भी शास्त्र दान किया गया एवं गुरुदेव का पाद-प्रक्षालन भी किया गया। उपरांत सभी भक्तगणों को गुरुवर की मंगलमयी वाणी सुनने का अवसर प्राप्त हुआ; जिसमें आचार्यश्री ने श्रुत की महिमा, श्रुतपंचमी कैसे? क्यों? एवं इसके महत्व आदि का विशेष रूप से व्यक्त किया। सभी को श्रुतपंचमी पर्व का महत्व जानने का अवसर प्राप्त हुआ एवं सायंकाल को विशेष प्रश्नमंच भी किया गया। लखनादौन से आये कमेटी एवं समाज के बहुत संख्या में आये लोगों के विशेष आग्रह के उपरान्त आचार्य संघ का बारह दिनों के प्रवासोपरान्त विहार चरगवाँ की ओर हो गाया।

आर्यिका संघ का विहार-समाचार

संत शिरोमणि आ.श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित परम पूज्य अध्यात्म योगी, वात्सल्य मूर्ति, परम धर्म प्रभावक आचार्य गुरुवर श्री आर्जवसागरजी महाराज की आज्ञानुवर्ती शिष्या आर्यिका रत्न श्री प्रतिभामति माताजी ससंघ के पावन सान्निध्य में मंडी बामौरा में 01.01.2021 को बड़े बाबा का मस्तकाभिषेक संपन्न हुआ एवं चन्द्रप्रभ एवं पार्श्वनाथ भगवान का जन्मकल्याणक मनाया गया। दिनांक 25.01.21 से 02.02.2021 तक लोक कल्याण महामंडल विधान का भव्य आयोजन गंधकुटी की रचना के साथ संपन्न हुआ और 02.02.2021 को श्रीजी भव्य शोभा यात्रा निकाली गई जिसने पूर्व में हुए पंच कल्याणक को याद दिला दिया।

पश्चात् 4 फरवरी को मंडी बामौरा से सनाई गाँव से होते हुए पठारी की ओर मंगल विहार हुआ। दि. 05.02.2021 को पठारी में भव्य मंगल प्रवेश हुआ तथा आदिनाथ भ. के जन्म जयंती दिवस पर बड़े बाबा का अभिषेक संपन्न हुआ। पश्चात् पठारी से रसूलपुर, त्योंदा, हिम्मतपुर, हैदरगढ़, उड़दमऊ आदि गाँव से होते हुए आर्यिका संघ का मंगल प्रवेश गढ़ी गाँव में हुआ। कुछ दिन के प्रवास के बाद रमपुरा, करमोदी, जमुनिया, षोडरपुर आदि गाँवों में प्रवचन आदि के माध्यम से प्रभावना करते हुए सिलवानी नगर में नवयुवक दिव्यघोष के साथ भव्य मंगल अगवानी हुई। आर्यिका माताजी के प्रवचनादि के माध्यम से बहुत प्रभावना हुई जिससे समाज के सभी लोगों ने ग्रीष्मकालीन वाचना के लिए निवेदन किया। लेकिन दि. 14 मार्च को आर्यिका संघ का विहार चंदनपिपरिया, उदयपुरा से होते हुए साँईखेड़ा की ओर हुआ। वहाँ पर श्री बड़े-बाबा का विधान हुआ। पश्चात् साँईखेड़ा से गाडरवारा के लिए विहार हुआ। गाडरवारा में सभी मंदिरों के दर्शन करते हुए चावली मंदिर में कुछ दिनों के प्रवास पर अष्टाह्निका महापर्व पर श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान सानंद संपन्न हुआ। जिसमें सभी मंदिरों के श्रावकगणों ने सम्मिलित होकर धर्म लाभ लिया। पश्चात् गाडरवारा से 6 अप्रैल को सिहोरा की ओर गमन हुआ। सिहोरा में कुछ दिनों का प्रवास रहा। पश्चात् करेली वालों के नम्र निवेदन से करेली की ओर विहार हुआ। करेली में बगीचा मंदिर में कोरोना महामारी के काल में करीब डेढ़ महीने का प्रवास रहा। तदुपरांत देवरीकलां से होते हुए नरसिंहपुर कमेटी के निवेदन से 6 जून को कंदेली मंदिर नरसिंहपुर में भव्य अगवानी हुई। श्रावकों की तीव्र भावना से 9 जून को श्री शांतिनाथ भ. के त्रयकल्याणक, महामहोत्सव के उपलक्ष्य में श्री शांतिनाथ महामंडल विधान एक-एक अर्घ में 1-1 अष्ट द्रव्य की थाली समर्पित करते हुए सानंद संपन्न हुआ। कुछ समय और ठहरने का निवेदन होते हुए भी आर्यिका संघ का विहार धमना से होते हुए ठेमी की ओर हुए। ठेमी में 11 जून को श्री पार्श्वनाथ महामंडल विधान संपन्न हुआ। ठेमी से करकबेल की ओर विहार हुआ। वहाँ पर भी श्री शांतिनाथ मंदिर में श्री कल्याणमंदिर महामंडल विधान संपन्न हुआ। करकबेल से इमलिया होते हुए 13 जून को गोटेगाँव में प्रात:काल की मंगल बेला में बाजे के साथ मंगल प्रवेश हुआ। प्रवचनादि के माध्यम से धर्म प्रभावना हुई। 20 जून को गोटेगाँव से बंडोल की ओर विहार हुआ। बंडोल में रात्रि विश्राम करते हुए प्रात:काल 21 जून को चरगवां गाँव में अतिशयकारी पार्श्वनाथ भ. के दर्शन के साथ आ.गुरुवरश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ के दर्शन करने का महासौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरु-शिष्या का संगम देखकर सभी भाव-विभोर हो गए।

चरगवाँ आर्यिकाद्वय को मिला गुरुदर्शन का मंगल सौभाग्य

दिनांक 20 जून 2021 को आचार्य ससंघ का मंगल विहार शहपुरा से होकर चरगवां में भव्य अगवानी हुई। यहाँ आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज की सुयोग्य शिष्या आर्यिका श्री 105 प्रतिभामति एवं आर्यिका श्री 105 सुयोगमति माताजी को भी कई दिनों के बाद आचार्य ससंघ के दर्शन करने का अवसर मिला। 21 जून को प्रात:काल आर्यिका संघ द्वारा गुरुदेव की प्रदक्षिणा लगाई गई उपरांत गुरुभक्ति की गई। पश्चात् आर्यिका द्वय ने गुरुदेव से रत्नत्रय की सकुशलता पूछी। चरगवां वासियों एवं पहाड़ी, दमोह आदि से पधारी बहनों को यह गुरु-शिष्या मंगल सान्निध्य के अनुपम दृश्य देखने का लाभ प्राप्त हुआ।

पश्चात् बरगी (जबलपुर), लखनादौन आदि अनेक स्थानों से पधारी कमेटियों द्वारा गुरुवर से श्रीफल भेंट कर निवेदन किया कि हे गुरुदेव! आपके चातुर्मास का लाभ हमें प्राप्त हो। करीब 4 दिन चरगुवाँ प्रवास उपरांत आचार्य गुरुदेव का मंगल विहार भारतपुर (अतिशय क्षेत्र) होते हुये बरगी की ओर हुआ। 3-4 दिन बरगी में प्रवास उपरांत आचार्य ससंघ का मंगल विहार धूमा की ओर हुआ।

धूमा नगर में संघमिलन

धूमा नगर में आचार्य श्री आर्जवसागरजी महाराज का आर्यिका श्री 105 मृदुमति माताजी ससंघ एवं आर्यिकाश्री 105 प्रतिभामति ससंघ द्वारा मंगल अगवानी की गई पश्चात् आर्यिका संघों द्वारा गुरुचरण वन्दना एवं गुरुवर की प्रदक्षिणा लगाई गई। यह दृश्य देखकर ऐसा लग रहा था मानो धूमा नगर में जिनधर्म की प्रभावना की धूम मची हो। पश्चात् 30 जून 2021 को ही सायंकाल गुरुवर ससंघ का मंगल विहार लखनादौन एवं आर्यिकाद्वय का मंगल विहार घनसोर की ओर हुआ।

लखनादौन का जागा लक
धूमधाम से की गई मंगल अगवानी

दिनांक 1 जुलाई 2021 को प्रात:काल की बेला में आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज ससंघ की भव्य मंगल अगवानी, जयघोष एवं बाजों के साथ बड़ी ही धूमधाम से की गई। इस मंगल दिन के अवसर पर नगर के एसडीएम सिद्धार्थ जैन (**I.P.S.**) भी उपस्थित रहे। नगर के द्वारों को सजाया गया, घरों-घरों के द्वार पर रांगोली सजाकर गुरुदेव का पाद-प्रक्षालन कर मंगल आरती उतारी गई।

पश्चात् श्री 1008 दि. जैन बड़ा मंदिर लखनादौन में आचार्यश्री ससंघ विराजमान हुये। पश्चात् गुरुदेव के पाद-प्रक्षालन उपरांत शास्त्रदान दिया गया। तदुपरांत लखनादौन समस्त सकल दि. जैन समाज के सभी वरिष्ठ जनों एवं मंदिर कमेटी द्वारा गुरुदेव ससंघ से चातुर्मास हेतु निवेदन किया गया। पश्चात् सभी श्रावकों को गुरु आर्जव-वाणी सुनने का धर्म लाभ भी प्राप्त हुआ।

सम्यग्ज्ञान-भूषण तथा सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु आवेदन-पत्र

मैं ..... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री .... जिला .....से भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता प्राप्त है☐ नहीं है☐ सम्यग्ज्ञान-भूषण हेतु 400/- रुपये☐ तथा सिद्धांत-भूषण हेतु 400/- रुपये ☐ प्रस्तुत है। मेरा पता :- ....जिला ..... प्रदेश ..... पिनकोड ..... एस.टी.डी. कोड .....फोन नम्बर/ मोबाईल .....ई-मेल ..... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति ..... पिता श्री .... को सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण हेतु पंजीकृत किया जाता है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं ..... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री .....निवासी..... से **भाव विज्ञान पत्रिका** शिरोमणी संरक्षक सदस्य रुपये 50,000/- से अधिक ☐ पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक सदस्य रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/-☐सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा पता :- .....

जिला ..... प्रदेश .....पिनकोड ..... एस.टी.डी. कोड .....

फोन नम्बर/ मोबाईल ..... ई-मेल ..... है।

दिनांक हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति ..... पिता श्री ..... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक .....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

नोट:- ''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर व रसीद प्राप्त कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।

सम्पर्क : प्रधान सम्पादक-डॉ. अजित कुमार जैन - 7222963457, प्रबंध सम्पादक-डॉ. सुधीर जैन - 9425011357

भाव विज्ञान परिवार

❄❄❄❄❄ शिरोमणी संरक्षक ❄❄❄❄❄

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड) ● श्रीमती जैन नीतिका इंजीनियर हर्ष कोछल्ल, हैदराबाद ● डॉ. जैन संकेत शैलेष मेहता, सूरत ● श्री जैन श्रेणिक श्रेयस बीएल पचन्ना बैंग्लोर ● श्री प्रवीण जैन महावीर रोडलाइन्स, दमोह ● श्रीमती रजनी इंजीनियर महेन्द्र जैन ● श्रीमती अनिता डॉ. (प्रो.)सुधीर जैन ● श्रीमती नीलम राजेन्द्र जैन (एक्साइज़), भोपाल ● श्री जैन अतुल, विपुल, कल्पेश रमेशचंद मेहता, अहमदाबाद ● श्री जैन चंदूलाल राजकुमार काला, कोपरगांव ● श्री जैन संजय मित्तल, रामगंज मण्डी (कोटा) ● श्रीमती जैन विद्यादेवी (वैशाली बेन) अश्विन परिख मनन-सलोनी, सूरत, ● **वर्जीनिया(यूएसए) :** इंजी. अपराजित कोशल सुपुत्र श्रीमती सुषमा -डॉ. अजित जैन।(भोपाल) ।

❄❄❄❄ परम संरक्षक ❄❄❄❄

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी, ● श्री प्रेमचंद जैन कुबेर, भोपाल ● **कटनी:** श्री पवन कुमार पंकज कुमार जैन।

❄❄❄ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ❄❄❄

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी :** सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

❄❄ पुण्यार्जक संरक्षक ❄❄

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली।

❄ सम्मानीय संरक्षक ❄

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, डॉ. जयदीप जैन मोनू,भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर :** श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन ● **सूरत :** श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह। ● **पथरिया (दमोह) :** श्रीमती जैन उषा पदम मलैया ● **गुड़गांव :** श्री हिमांशु कैलाशचंद जैन।

❄ संरक्षक ❄

● **रीवा:** श्री जैन विजय अजमेरा, डॉ. अश्विनी जैन ● **छतरपुर:** श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली :** श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● **हस्तिनापुर (मेरठ):** श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर ● **गुड़गांव:** श्री संजय जैन ● **गाजियाबाद :** श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन ● **कलकत्ता:** श्री जैन कल्याणमल झांझरी ● **भोपाल:** श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, ● **कोटा:** श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंजमण्डी ● **गुवाहाटी:** श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी ● **पांडीचेरी :** श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया ● **सूरत :** श्रीमति विमला मनोहर जैन, श्री निर्मल जैन ● **जयपुर :** श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर:** श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर :** श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह) :** श्री मुकेशकुमार जैन (संजय साईकिल) ● **ललितपुर :** श्री अनिल जैन 'अंचल' ● **झलोन(दमोह) :** श्री दिनेश जैन

❄ विशेष सदस्य ❄

● **दमोह :** श्री मनोज जैन दाल मिल ● **अजमेर :** श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत :** श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपाल:** श्री राजकुमार जैन, बिजली नगर ● **कटनी :** श्री शुभमकुमार सुभाषचंद जैन, ● **पन्ना :** श्री महेन्द्र जैन, पवई।

❄ नवागत सदस्य ❄

● **सागर (वर्णी कालोनी) :** श्री जैन महेंद्र सोधिया, श्रीमति जयश्री मुकेश जैन, श्री अनूप जैन, श्री प्रेमचंद जैन, श्री राजेन्द्र जैन, श्रीमति सुनीता चक्रेश जैन (पटना), श्री फूलचंद जैन ।(**अंकुर कालोनी**) श्री जैन प्रकाश मोदी, श्रीमति जैन रजनी सेठ लक्ष्मीचंदजी घीवाले, श्रीमति प्रतिभा सुनील जैन, श्री जिनेन्द्र जैन राहतगढ़, इंजीनियर आलोक जैन, श्री हेमचंद जैन ।(**नेहा नगर**) श्री मनोज जैन एमपीईबी वाले, श्री सुनील जैन, श्री विमल जैन, श्री जैन मनोज राजकुमार भायजी, श्री अजय जैन, श्री सतीश जैन, इंजीनियर राजेन्द्र जैन, श्री ऋषभ जैन कबाड़ी, श्री नीलेश जैन भूसावाले, इंजीनियर अनिल जैन। ● **गढ़ाकोटा:** श्रीमति जैन कुसुमरानी शिखरचंद वैसाखिया । ● **टीकमगढ़:** श्री पुष्पेन्द्र जैन मडावरावाले। ● **अमरावती:** श्री सुभाष जैन (चंदूर रेल्वे स्टेशन)

पटेरिया, गढ़ाकोटा के मूलनायक भ. पार्श्वनाथ के दर्शनार्थ पधारे आचार्यश्री 108 आर्जनसागरजी महाराज ससंघ।

पटेरियाजी गढ़ाकोटा में आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ द्वारा मूलमंदिर में दर्शन करते हुए का दृश्य।

गढ़ाकोटा, सागर में आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ का आशीष पाते हुए श्रद्धालुगण।

दमोह नगर में आचार्य आर्जवसागरजी ससंघ प्रवेश पर ध्वज धारण किये हुए पंचायत अध्यक्ष सुधीर सिंघई जी।

दमोह नगर प्रवेश पर आचार्य श्री आर्जवसागरजी की अगवानी पर ध्वज सम्हाले हुए संजीव शाकाहारी जी।

एकलव्य महाविद्यालय, दमोह में आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ की अगवानी करती हुई सुधा मलैया दमोह।

ओजस्वनी व एकलव्य महाविद्यालय, दमोह में आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ का पदार्पण ।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

प्रति

सागर नाका, दमोह में आर्जवछाया गृह में आहार ग्रहण करते हुये आचार्यश्री आर्जवसागरजी।

सिविल वार्ड, दमोह जिनालय में दर्शन करते हुए आ. श्री आर्जवसागरजी ससंघ।

केन्द्रीय मंत्री श्री प्रहलाद सिंह पटेल आचार्यश्री आर्जवसागरजी का दमोह में दर्शन कर आशीर्वाद लेते हुये।

माननीय प्रद्युम्नसींग लोधीजी आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के दर्शन करते हुए।

श्री सुभाष भगत, संगठन मंत्री, भा.ज.पा. (म.प्र.) आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज से आशीर्वाद लेते हुए।

कुंडलपुर कमेटी अध्यक्ष संतोष सिंघई आ. श्री आर्जवसागरजी महाराज से कुण्डलपुर पधारने हेतु निवेदन करते हुए।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के दर्शनार्थ पधारी गंजबासौदा विधायक श्रीमती लीना जैन।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन मो.:9826240876 द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 7222963457, 9425601161